चन्दामामा
जुलाई १९६४

जुलाई १९६४

★

विषय - सूची

★

एक प्रति ६० नये पैसे

वार्षिक चन्दा रु. ७-२०

ओहो, साइकल तो अच्छी है ! क्या तुम्हारे पिताजीने लाके दी है ?
नहीं...यह तो मैंने खुदके पैसों से ली है ।

खुद के पैसों से ? कहाँ से मिले इतने पैसे तुम्हे ?
मैंने बचा-बचा के अपने बैंक एकाउन्ट में जमा किये हैं ।

बेंक एकाउन्ट ? कौनसा बेंक एक लड़के का एकाउन्ट खोलेगा ?
देना बेंक । उनकी एक योजना है जो 'अल्पवयस्क बचत योजना' कहलाती है ।

इस योजना से कोई भी दस वर्ष या अधिक उम्र का लड़का एकाउन्ट खोल सकता है ।
अच्छी बात बतायी ! मैं भी एक साइकल लेने का सपना देख रहा हूं !

एक स्वप्न पूरा हुआ

कितने ताज़े, कितने स्वच्छ...

पाँचवें लड़के के लिए एक मित्रवत् संकेत: औरों की तरह तुम भी कोलिनॉस का प्रयोग करो और मुस्कराओ। रोज़ रात को कोलिनॉस डेन्टल क्रीम से दांत ब्रश करना चाहिए...और रोज़ सुबह तो ऐसा करना ज़रूरी ही है। मित्रों के बीच अपने पर भरोसा रहेगा...अधिक आनन्द आएगा।

मधुर मुस्कान...कोलिनॉस की मुस्कान

रजिस्टर्ड प्रयोगाधिकारी: जेफ्री मैनर्स एंड कम्पनी लिमिटेड

आजादी खतरे में है।
पूरी ताकत लगा कर इसकी रक्षा कीजिए।

—जवाहरलाल नेहरू

देश की रक्षा आपका भी काम है

आजादी की रक्षा के लिए हमें पूरे अनुशासन और त्याग से काम करना है। पूरी ताकत से काम करके और पैदावार बढ़ा कर देश की रक्षा में मदद कीजिए।

आप का अनुशासन भारत की शक्ति है

दिलीप
और उनके
साथियों
से मिलिये
भई, आज से ही शुरू हो जाय, जो सहमत हों...
बिलकुल ठीक
हाँ,
हमारे संघ कोष में दान दीजिये !
देखा प्यारे !

नये प्रधान मन्त्री, लाल बहादुर शास्त्री

जब प्रधान मन्त्री जवाहरलाल नेहरू जीवित थे, तो प्रश्न किया जाता "नेहरू के बाद कौन ?" पर प्राय: इसका उत्तर न दिया जाता। लेकिन नेहरू के बाद एकमत से श्री लाल बहादुर शास्त्री को चुना गया है।

लाल बहादुर का पहिला शब्द श्री जवाहरलाल का अन्तिम शब्द है। लाल बहादुर भी, गान्धी जी की तरह २ अक्टोबर को पैदा हुए। जो व्यक्ति, एक साथ जब गान्धी जी और जवाहरलाल जी का स्मरण कराता हो, वह कैसा है !

लाल बहादुर ६० वर्ष पूर्व मोगलसराय में पैदा हुए। उनका घराना गरीब था। १८ मास के ही थे कि उनके पिता गुजर गये और उनका पालन पोषण नाना के घर हुआ।

लाल बहादुर बचपन से ही जानते थे कि गरीबी किसे कहते हैं। कहते हैं कि एक बार उनके पास नाव में गंगा पार जाने के लिए एक आना भी नहीं था, लाचार हो, पुस्तकें सिर पर रखकर, उनको गंगा तैर करके पार करनी पड़ी।

लाल बहादुर ने बनारस के हरिश्चन्द्र पाठशाला में अध्ययन किया। फिर काशी विद्या पीठ में पढ़े। वहाँ से स्नातक होकर "शास्त्री" बने। विद्यार्थी थे कि उन्होंने गान्धी जी द्वारा चलाये गये सत्याग्रह में भाग लिया।

फिर उनको लाला लाजपतराय के आन्दोलन ने आकर्षित किया। वे प्रजा सेवा समाज में आजीवन सदस्य हो गये। अलहाबाद में काम करने आये और इस तरह श्री नेहरू के प्रभाव में भी आये। अल्हाबाद म्युनिसिपालिटी का सदस्यत्व उनका पहिला पद था।

नमक सत्याग्रह में ढाई साल, व्यक्तिगत सत्याग्रह में एक साल, "भारत छोड़ो" आन्दोलन में तीन वर्ष, वे जेल में रहे।

यूँ तो वे कान्ग्रेस की राजनीति में पहिले ही जम गये थे, परन्तु वे १९३५ में उत्तर प्रदेश कान्ग्रेस कमेटी के प्रधान मन्त्री नियुक्त हुए। १९४६ में उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री गोविन्द वल्लभ पन्त के पार्लियामेन्ट्री मन्त्री नियुक्त हुए। अगले साल वे यातायात विभाग के मन्त्री बने।

१९५२ में वे केन्द्रीय राजनैतिक क्षेत्र में रेल्वे मन्त्री के रूप में आये। एक रेल दुर्घटना के कारण उन्होंने अपने मन्त्री पद को इस्तीफा दे दिया। १९५७ में लोक सभा के लिए निर्वाचित हुए, कई विभागों के मन्त्री रहे।

लाल बहादुर सात्विक प्रकृति के हैं। निराडम्बर और शान्तिप्रिय हैं। सहिष्णु हैं। वे लेखक भी हैं। इनके नेतृत्व में देश ज़रूर आगे बढ़ेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
"चाचा नेहरू" अब हमारे साथ नहीं रहे। दिवंगत हो गये हैं। पर वे अमर हैं। भारत के इतिहास में नेहरू जैसे उदात्त व्यक्ति विरले ही हैं। उनका जीवन हमारे लिए आदर्शप्राय है। वर्तमान प्रधान मन्त्री और श्री नेहरू जी के निकट मित्र श्री लाल बहादुर शास्त्री के नेतृत्व में, हम आशा करते हैं कि हमारा राष्ट्र नेहरू जी के सिद्धान्तों और आदर्शों का पालन करता रहेगा।
वर्ष : १५ जुलाई १९६४ अंक : ११

भारत का इतिहास

विजयनगर साम्राज्य की स्थापना के बारे में कहानियाँ अधिक हैं, अपेक्षाकृत ऐतिहासिक प्रमाणों के। इन कहानियों में भी कई भेद हैं।

संगम नामक व्यक्ति के पाँच लड़के थे और उनमें हरिहर राय और बुक्क राय प्रसिद्ध हुए। पाँचों भाइयों ने तुंगभद्रा नदी के दक्षिणी तट पर, उत्तरी तट के अनेगोन्दी दुर्ग के सामने, विजयनगर का निर्माण करके विजयनगर राज्य की स्थापना की—यह बात सर्वत्र प्रचलित है।

इनको नगर स्थापना और साम्राज्य स्थापना की प्रेरणा देनेवाले, माधव विद्यारण्य और उनका भाई सायन थे। दोनों ही ब्राह्मण पंडित थे। इसी सायन ने वेदों का भाष्य किया था।

कुछ का कहना है कि ये पाँचों तेलुगु देश के थे। काकतीयों के राज्य से तुंगभद्रा के तट पर आये थे।

कुछ भी हो एक बात ठीक है, हरिहर राय, बुक्क राय और उनके तीनों भाइयों ने उत्तर से होनेवाले मुसल्मानों के आक्रमणों का सामना करने के लिए खूब प्रयत्न किया।

इन्होंने भारत में अन्यत्र प्रचलित परधर्म, परसंस्कृति के प्रभाव को रोका और लगभग तीन सदियों तक भारतीय संस्कृति की रक्षा की।

इन्होंने बहमनी राज्य को न दक्षिण में फैलने दिया, न उत्तर में ही बढ़ने दिया। "इस समय की राजनैतिक परिस्थिति की कुंजी विजयनगर थी"—

यह ऐतिहासिकों का मत है। यह ही भारत के इतिहास में विजयनगर की प्रधानता का मुख्य कारण है।

विजयनगर के प्रथम परिपालक संगम वंश के थे। प्रथम हरिहर राय और प्रथम बुक्क राय के समय में ही होयसल राज्य का बहुत-सा भाग विजयनगर राज्य में मिला दिया गया था। पर कहा जाता है, हरिहर राय और बुक्क राय ने पूर्ण रूप से राज्य नहीं किया था। १३७४ में बुक्क राय ने चीन राजदूत भेजा। १३७८-७९ में इसकी मृत्यु के बाद इसका लड़का द्वितीय हरिहर राय गद्दी पर आया। इसने अपने नाम के साथ "महाराजाधिराज, राजपरमेश्वर" आदि उपाधियाँ जोड़ीं। ऐतिहासिकों का कहना है कि इसके समय में पूर्ण शान्ति थी—पर शिलालेखों से यह ज्ञात होता है कि विजयनगर और मुसल्मानों में लड़ाई हुई थी।

बहमनी राज्य की तरह विजयनगर साम्राज्य भी निरन्तर अनेक राज्यों से युद्ध करता रहा।

१३९८ में द्वितीय हरिहर के लड़के द्वितीय बुक्क राय ने पिता की अनुमति
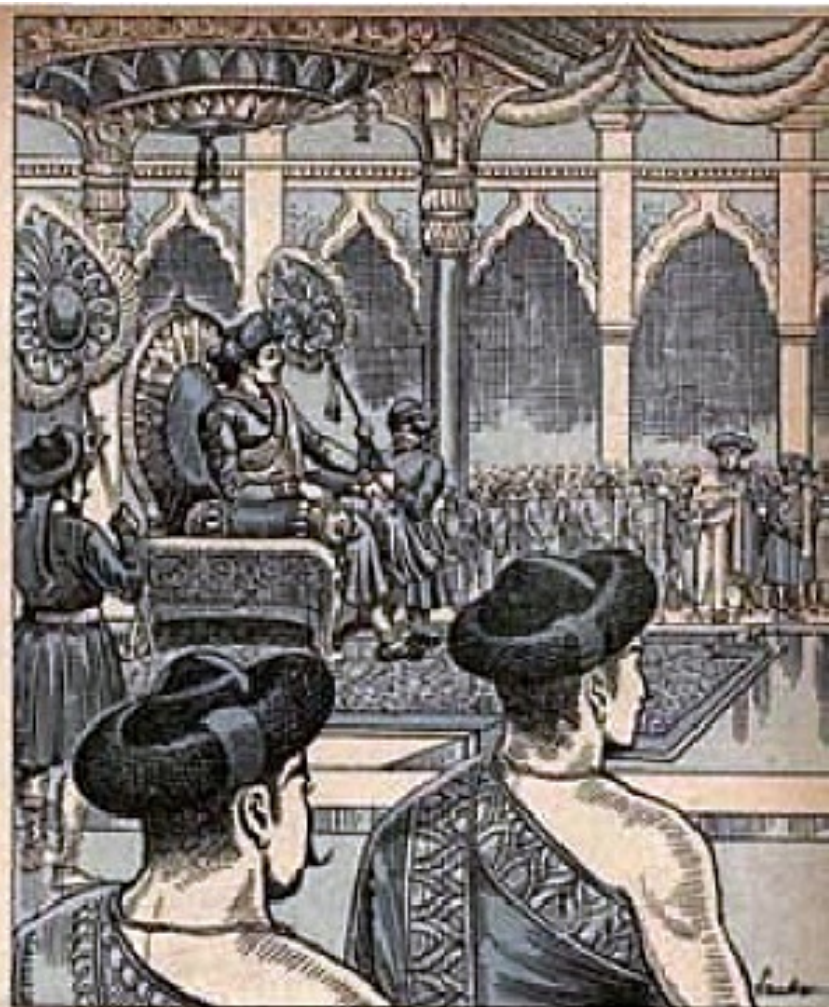
पर कृष्ण और तुंगभद्रा के बीच के प्रान्त, रायचूर को वश में करने के लिए बहमनी देश पर उत्तर में आक्रमण किया।

इस प्रान्त के लिए विजयनगर राज्य और बहमनी राज्य में शुरु से ही युद्ध होते आये थे।

परन्तु इस युद्ध में द्वितीय बुक्क राय, फिरोज शा बहमनी द्वारा हरा दिया गया। १३९९ में बुक्क राय को बहुत हरजाना देकर उससे सन्धि करनी पड़ी।

तो भी द्वितीय हरिहर के समय विजयनगर साम्राज्य दक्षिण भारत में फैला। मैसूर, कन्नड़ प्रान्त, चेन्गलपेट, तिरुची, कंची, विजयनगर के अन्तर्गत आये। द्वितीय हरिहर शैव था। विरूपाक्षस्वामी की आराधना किया करता था। परन्तु वह अन्य धर्मों के विषय में भी सहिष्णु था। वह १४०६ अगस्त में मर गया। उसके बाद उसके लड़कों में उत्तराधिकार के लिए झगड़ा हुआ। आखिर ५ नवम्बर १४०६ को प्रथम देवराय सिंहासन पर आया। बहमनी सुल्तानों द्वारा यह कई युद्धों में पराजित हुआ। १४२२ इसकी मृत्यु हो गई।

इसके बाद इसके लड़के विजय बुक्क राय (अथवा वीर विजय) ने कुछ मास मात्र ही राज्य किया। इसके बाद इसका पुत्र द्वितीय देवराय राजसिंहासन पर बैठा। यद्यपि यह भी बहमनी सुल्तानों द्वारा हराया गया, तो भी इसने अपनी शासन प्रणाली पुनर्व्यवस्थित की। बहमनी सुल्तानों से मुकाबला करने के लिए इसने अपनी सेना में मुसल्मान भरती किये। व्यापार को सुधारने के लिए अपने दायें हाथ लक्ष्मन्ना नामक व्यक्ति को "दक्षिण समुद्राधिपति" नियुक्त किया और समुद्र का सारा व्यापार उसके हाथों में छोड़ दिया। १४२० में एक इटाल्यिन यात्री, १४४३ में फ़ारस का राजदूत विजयनगर आये। उन दोनों ने विजयनगर और विजयनगर साम्राज्य की बहुत प्रशंसा की है। उस समय विजयनगर साम्राज्य सारे दक्षिण भारत में फैल गया था, लंका तक चला गया था। यह विजयनगर साम्राज्य की उच्च दशा थी।

प्रह्लाद

[२]

हिरण्यकश्यपु जब तपस्या के लिए जा रहा था तब उसकी पत्नी, लीलावती गर्भवती थी। उसी समय इन्द्र ने राक्षसों पर आक्रमण किया उनको युद्ध में हराया और लीलावती को पकड़कर ले गया।

तब नारद ने इन्द्र के पास आकर कहा—"यह परम साध्वी है। पर महा पतिव्रता है। क्यों इनको पकड़ा? इनको छोड़ दो।"

"इसके गर्भ में लड़का है। उसे मार कर इसे छोड़ दूँगा।" इन्द्र ने उसकी बात न मानी।

जब नारद ने कहा कि इसके गर्भ में बड़ा हरिभक्त है, तो इन्द्र ने उसे छोड़ दिया। नारद उसको अपने आश्रम में ले गया और उसने उसे तत्वोपदेश दिया। लीलावती के गर्भ के शिशु को भी वह उपदेश मिला।

यह शिशु ही प्रह्लाद था। हिरण्यकश्यपु के प्रह्लाद को मिलाकर चार लड़के थे। बाकी के नाम थे, अनुह्लाद, संह्लाद और ह्लाद। उनमें प्रह्लाद सब से अधिक प्रसिद्ध है। वह बड़ा शीलवान, शान्त, विनयशील और उदार था। उस में असुर लक्षण बिल्कुल भी न थे। यही नहीं पैदा होते ही उस में भक्ति थी। खेलते समय, सोते समय, खाते समय, हमेशा उसका मन हरि पर ही लगा रहता। हरिभक्ति में, प्रह्लाद कभी कुछ गाता, तो कभी नाचता। इसतरह उत्तर देता, जैसे उसे कोई पुकार रहा हो। कभी उसकी आखों से आँसू

बह उठते, तो कभी मौन हो जाता। हरिभक्ति में तन्मय रहता।

राक्षसों के गुरु शुक्र के चण्ड और अपर्क दो लड़के थे।

वे हरिण्यकश्यपु के घर में रहकर और बच्चों के साथ, प्रह्लाद को भी राजनीति सिखाया करते।

गुरुओं की दी हुई शिक्षा, प्रह्लाद ले तो रहा था, पर उस शिक्षा में उसे कोई विश्वास न था।

एक दिन हिरण्यकश्यपु ने प्रह्लाद को गोदी में बिठाकर कहा—"जो तुम पढ़ रहे हो, उस में सब से अच्छा विषय कौन-सा लगा?"

प्रह्लाद ने कहा—"पिता जी! भ्रम जन्म अहँकार में घुटे प्राणों के अन्धेरे कुँयें-से घर को छोड़कर कहीं जंगल में जाकर भगवान का ध्यान करना ही मुझे सब से अधिक अच्छा लगता है।"

हिरण्यकश्यपु ने ज़ोर से क्रुद्ध होकर कहा—"बच्चों का मन जिधर चाहो, उधर आसानी से मोड़ा जा सकता है। कोई हरिभक्त इसका मन यों बदल रहा है। उसे बिगड़ने न दो और इसको अच्छी शिक्षा दो।"

चन्ड और अपर्क, प्रह्लाद को विद्यागृह में ले गये। और उससे प्यार से कहा—"तुम बहुत बुद्धिमान हो। बिना झूट बोले तुम बताओ। तुम्हें इस तरह की बातें क्या कोई सिखा रहा है? या तुम ही सोचते हो—बाकी बच्चे क्यों नहीं इसतरह की बातें करते?"

"भगवान के बताये माया के कारण ही, स्व और पर का भेदभाव पैदा होता है। यह भ्रम, ब्रह्मा को भी तंग करता है। फिर मामूली आदमियों का तो कहना क्या!

चूँकि, हरि, मेरे मन को हमेशा चुम्बक की तरह खींचता रहता है इसलिये जो आप बता रहे हैं और जो मुझे सूझ रहा है उसमें भेद दिखाया पड़ता है।" प्रह्लाद ने कहा।

"अरे दुष्ट कहीं का। तुम कहाँ से हमें बदनामी देने के लिये आ पड़े हो! उस विष्णु को, जो चन्दन बन से दैत्य वंश के लिये कुल्हाड़ी-सा है, तुम सहारे की लाठी की तरह लाये हो।" दोनों गुरु प्रह्लाद भय दिखाकर, उसे पढ़ाने लगे।

उसे, उन्होंने धर्म अर्थ काम के बारे में बताया। जब वे जान गये कि चतुरोपाय वह जान गया था, उसे अच्छी तरह नहला धुलाकर, खिला पिलाकर हिरण्यकश्यपु के पास ले गये।

हिरण्यकश्यपु ने उससे लाड़ प्यार से गोदी में बिठाया, पहिले की तरह उससे पूछा—"बेटा, जो कुछ तुमने पढ़ा है, उसमें सब से अच्छा क्या लगा!"

इस पर प्रह्लाद ने कहा—"हरिश्रवण, कीर्तन, स्मरण, सेवा, अर्पना, वन्दन, दास्य, मैत्री आत्मसमर्पण, आदि नवमार्गवाला भक्ति मार्ग का अनुसरण ही विद्या में सर्वोत्तम है, यह मेरी धारणा है।"

हिरण्यकश्यपु ने क्रुद्ध होकर कहा—"ब्राह्मण अधम कहीं के। तुम मेरी बस, इतनी ही परवाह करते हो! लड़के को तुम ये ही विद्या सिखा रहे हो!"

"महाराज, आप क्रुद्ध न होइये। जो यह कह रहा है वह हमने नहीं सिखाया है। दूसरों का बताया हुआ भी नहीं है। उसे ये बातें जन्म से मिली हैं। हमारी इसमें कोई गल्ती नहीं है।" गुरुओं ने निवेदन किया।

चण्ड और अमर्क के यह कहते ही हिरण्यकश्यपु ने प्रह्लाद से कहा—"दुष्ट कहीं का, बिना गुरुओं के बताये, ये विचार तुम्हें कैसे सूझे?"

"इन्द्रियों के वश में होकर, संसार में डूबने तैरनेवालों के लिए हरिभक्ति स्वयं उद्भूत होती है। किसी के कहने से नहीं पैदा होती।" प्रह्लाद ने पिता से कहा।

यह सुनते ही हिरण्यकश्यपु ने प्रह्लाद को अपनी गोदी में से हटा दिया और सैनिकों से कहा—"इसे ले जाओ और मरवा दो। जिसने इसके चाचा को मारा है, वह उसी के पद चिन्हों पर चल रहा है। इसलिए मेरी नजर में यह भी मेरे भाई का हत्यारा है। पाँच वर्ष की उम्र में ही जो माँ बाप का शत्रु हो गया है, वह उस हरि के लिए क्या नहीं करेगा! क्या हुआ अगर यह मेरा लड़का है। क्या हम अपने शरीर के रोग का नाश नहीं करते! सड़े हुए अंग को नहीं निकाल फेंकते! विष के उपयोग, या किसी और तरीके से इसको मार दो।"
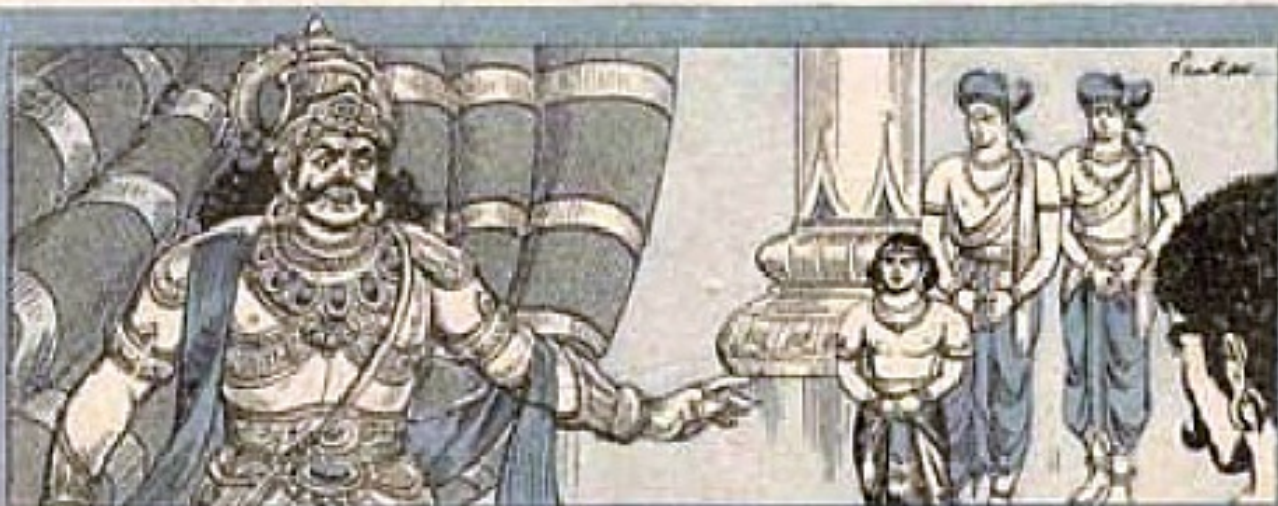
वर्षा ऋतु के शुरु शुरु के दिन थे। शाम हो गई थी। विष्णुपुर से मन्धारन जानेवाले मार्ग पर, एक युवक घोड़े पर सवार होकर अकेला जा रहा था। वह जिस प्रान्त में जा रहा था वह अनन्त सपाट मैदान था। इस डर से कि जल्दी ही अन्धेरा हो जायेगा, वह युवक घोड़े को और तेजी से भगा रहा था।

उसके मैदान पार करते करते सूर्य अस्त हो गया। बादलों से आवृत आकाश में अन्धकार छा गया।

जल्दी ही इतना अन्धेरा हो गया कि घोड़े को रास्ता दिखाई देना बन्द हो गया। आकाश में चमकनेवाली बिजलियों के प्रकाश में रास्ता देखते देखते वह आगे बढ़ता जाता था।

थोड़ी देर में जोर से हवा बहने लगी। युवक अपने आप घोड़ा न चला सका, उसने लगाम छोड़ दी और घोड़े को अपनी इच्छानुसार जाने दिया।

कुछ दूर इसतरह जाने के बाद, घोड़े के पैर पर कोई पत्थर सा लगा। उसी समय बिजली चमकी और युवक ने सामने कोई सफ़ेद इमारत देखी, जब उसने घोड़े से उतर कर देखा, तो उसने पाया कि घोड़े का पैर एक सीढ़ी से टकराया था।

श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय

उसने घोड़ा वहीं छोड़ दिया। वह सीढ़ियों पर इस आशा से चढ़ने लगा कि कहीं उसे वहाँ आश्रय मिल जाये। फिर बिजली चमकी, उसको सामने एक मन्दिर दिखाई दिया। यही वह सफेद इमारत थी, जो उसे दिखाई दी थी।

मन्दिर का दरवाजा बन्द था। उसने हाथ से जब किवाड़ टटोले, तो उसे पता लगा कि अन्दर से चटखनी लगी हुई थी।

"इस निर्जन वन में, इस समय यहाँ कौन छुपा हुआ है!" उस युवक ने चकित होकर सोचा।

जोर से वर्षा हो रही थी। उसने जोर से दरवाजे के किवाड़ खटखटाये। पर अन्दर से किसी ने आकर दरवाजा नहीं खोला। उसने लात मारकर किवाड़ तोड़ देना चाहा, पर उसे अनुचित समझ वह हाथों से किवाड़ और जोर से पीटने लगा। अन्दर की चटखनी टूट गई। किवाड़ खुल गये। और युवक अन्दर घुस गया। अन्दर से धीमी आवाज में, कोई अस्पष्ट स्वर सुनाई दिया। किवाड़ के खुलते ही, हवा का झोंका अन्दर आया और अन्दर टिमटिमाता दीप बुझ गया। इसलिए उस अन्धेरे में वह न जान सका कि वह किसकी आवाज थी।

उसने मन्दिर में मूर्ति को नमस्कार करके जोर से पूछा—"कौन है अन्दर?" इसका कोई उत्तर तो नहीं मिला, पर गहनों का खनखनाना सुनाई दिया।

युवक ने किवाड़ बन्द करते हुए कहा—"अन्दर रहनेवाले, मेरी बात जरा गौर से सुनो। मैं तलवार हाथ में रखकर मन्दिर के द्वार के पास विश्राम ले रहा हूँ। यदि अन्दर कोई आदमी है, और उसने यदि मेरी विश्रान्ति भंग की, तो उसको इसका

फल भुगतना पड़ेगा। यदि कोई स्त्री है तो वह निश्चिन्त हो, आराम कर सकती है। मैं किसी प्रकार की कोई हानि उसे नहीं पहुँचाऊँगा।"

थोड़ी देर में अन्दर से किसी स्त्री की आवाज सुनाई दी—"आप कौन हैं!"

उस प्रश्न को और उसके स्वर को सुनकर चकित होकर उसने पूछा—"आपको यह जानने से क्या फायदा कि मैं कौन हूँ!"

"हम बहुत डर रहे हैं!" उसी स्वर ने उत्तर दिया।

"मैं एक युवक हूँ। जब तक मैं यह नहीं जान जाता कि आप कौन हैं, मैं अपने बारे में नहीं बता सकता। मेरे कारण आपको कोई कष्ट नहीं होगा। न कोई हानि ही होगी। डर की कोई जरूरत नहीं है।"

"आपकी बातों से हमें धीरज हुआ है। हम अब तक प्राण हथेली पर लिए बैठे थे। हम सन्ध्या के समय इस शैलेश्वरालय में शिव की पूजा करने आये। पूजा पूरी नहीं हुई थी कि जोर से वर्षा हुई और तूफ़ान आया। हमारे लोग और वाहन हमें छोड़कर चले गये। हम यहाँ फँस गये हैं" उस स्त्री स्वर ने धीमे धीमे पर साफ़ साफ़ कहा।

"फ़िक्र न कीजिये, रात यहीं विश्राम कीजिये। सवेरे आपको आपके घर पहुँचा दूँगा।" युवक ने कहा।

"शैलेश्वर आपका कल्याण करें।" स्त्री ने कहा।

आधी रात के बाद तूफ़ान रुका। युवक ने अन्दर के लोगों से कहा कि वह पास के गाँव से दीप लायेगा और वे तब तक धीरज रखकर वहीं रहें। अन्दर

से स्त्री ने कहा कि दीये के लिए दूर आने की जरूरत नहीं है। आलय के आदमी का घर पास ही है। चूँकि वह जंगल में रह रहा है, इसलिए अग्नि के साधन उसके पास अवश्य होंगे।

युवक मन्दिर से बाहर निकला। बाहर चान्दनी थी। उस चान्दनी में उसे मन्दिर के पास ही, मन्दिर के चौकीदार का मकान दिखाई दिया। युवक ने वहाँ चौकीदार को उठाया। परन्तु उसे तुरत किवाड़ खोलते डर लगा। किवाड़ के छेद में से उसने युवक को देखा, उसके कहने पर कि वह कुछ सिक्के देगा, उसने दीया जलाया। युवक दीप लेकर, मन्दिर में आया। मन्दिर के अन्दर संगमरमर का बना शिवलिंग था। उसके पीछे दो स्त्रियाँ थीं। उनमें से एक तरुणी थी। उसने दीया देखते ही अपने मुँह पर हल्का-सा परदा डाल लिया। परन्तु उसकी पोषाक आभूषण और और चीजें देखकर यह जाना जा सकता था कि वह बड़े वंश की थी। बड़े परिवार की थी।

दूसरी स्त्री की उम्र पैन्तीस वर्ष के करीब थी। युवक ने सोचा कि वह उसकी सेविका होगी। वह दिखाने के लिए कि वह सेविका नहीं थी, वह गम्भीर दिखाई दे रही थी। एक और बात यह थी कि वे दोनों बंगाली स्त्रियाँ नहीं मालूम होती थीं पश्चिम की स्त्रियाँ लगती थीं।

दीये को ऐसी जगह रखकर, जहाँ से सब जगह रोशनी जा सके युवक उन दोनों स्त्रियों के सामने खड़ा हो गया। उन स्त्रियों ने उस रोशनी में उस युवक को देखा। उसकी उम्र पचीस से ज्यादह न होगी। अच्छा कदावर था। चौड़ी छाती थी। हाथ पैर भी बड़े बड़े थे।

खूबसूरत जान पड़ता था। रंग भी बड़ा अच्छा था। चमचमा रहा था। हल्के हरे रंग के कपड़े पहिन रखे थे, वह कोई राजपूत मालूम होता था। उसकी कमर पर म्यान में एक तलवार लटक रही थी। एक हाथ में पैना भाला था। सिर पर, सफ़ेद पगड़ी थी।

कानों में मोती जड़े कर्णाभूषण थे। गले में रत्नहार था।

उसको और उन स्त्रियों में भी एक दूसरे से परिचित होने की प्रबल इच्छा हुई। उसने ही पहिले अपनी उत्सुकता व्यक्त करते हुए कहा—"लगता है, आप ऊँचे वंश की हैं और अन्तःपुर की स्त्रियाँ हैं। परन्तु आपके बारे में अधिक पूछने के लिए कुछ झिझक रहा हूँ। चूँकि, मैं कौन हूँ, यह बताने के लिए कुछ रुकावटें हैं, क्योंकि आपके सामने कोई ऐसी रुकावटें नहीं हैं, इसलिए आपके बारे में सुनना चाहता हूँ।"

उस स्त्री ने जो सेविका-सी लगती थी कहा—"स्त्रियाँ, अपने बारे में क्या कह सकती हैं! उनको तो छुपकर ही रहना पड़ता है। इसी में उनकी प्रतिष्ठा है। उनका कोई पेशा नहीं होता। किसका नाम लेकर वे अपना परिचय दें! वे पति का नाम भी नहीं ले सकतीं।"

युवक ने कुछ नहीं कहा। उसका मन उस तरुणी पर लगा हुआ था। वह अपनी सेविका के पीछे से परदा हटाकर उस युवक की ओर लगातार देख रही थी। उसकी नज़र भी जो उस पर एक बार पड़ी तो वह नज़र फेर न सका। उतनी सुन्दर स्त्री को उसने पहिले कभी न देखा था।

उन दोनों को एक दूसरे को देखने में बड़ी खुशी हुई। जब स्त्री ने देखा कि

स्त्री ने युवक से कहा—"तूफ़ान की वजह से हम अच्छी आफ़त में फँसे हैं। चूँकि अब तूफ़ान कम हो गया है, हम धीरे धीरे घर चली जायेंगी।"

"मुझे भी अपनी मंजिल पहुँच जाना है। परन्तु मैं नहीं चाहता कि आपकी सखी बिना रक्षा के जाये। इसलिए मैं ही आपको घर तक पहुँचा आऊँगा।" युवक ने कहा।

"आपको हम पर इतनी दया! पर हमारी यह प्रार्थना है कि आप अपने काम पर चले जायें। यह न सोचें कि हम बिना कृतज्ञता के ये बातें कह रहे हैं। हम स्त्रियाँ हैं। कदम कदम पर हम पर सन्देह किया जाता है। मान लीजिये कि आप हमारे साथ हमें हमारे घर छोड़ आते हैं, मान लीजिए हमारे मालिक यानि इनके पिता अगर यह पूछेंगे कि इस रात के समय तुम्हारे साथ कौन आया है, तो क्या जवाब दिया जाये!"

युवक ने एक क्षण सोचकर कहा—"कहिये कि मानसिंह महाराजा के लड़के जगतसिंह के साथ आये हैं।" यह सुनते ही वे दोनों स्त्रियाँ इस तरह घबरायीं जैसे

युवक उसकी बात का कोई जवाब नहीं दे रहा था और उस लड़की की नज़र उस पर लगी हुई थी, तो उसने उसकी कान में कहा—"क्यों, साक्षात् शिव के सामने ही स्वयंवर करने का इरादा है!"

उस लड़की ने उसे ज़ोर से चूँटी काटकर कहा—"बस करो।"

यह सोच कि इस प्रेम के पकने से पहिले ही उसे भेज देना अच्छा था, क्योंकि प्रेमपाश में फँसने के बाद उसकी सखी को कष्ट ही कष्ट उठाने पड़ेंगे, उस

उस मन्दिर पर बिजली गिर गई हो। दोनों झट उठ खड़ी हुई। सेविका ने साड़ी का छोर गले में डालकर युवक के पैरों पर पड़कर हाथ बाँधकर कहा—"युवराज, अनजाने गल्ती हुई है, माफ़ करें।"

जगतसिंह ने मुस्कराकर कहा—"जो कुछ अपराध किया है, वह तो क्षमा कर दूँगा। पर यदि आपने अपने बारे में नहीं बताया तो अवश्य दण्ड दूँगा।"

तरुणी मुस्कराई उसने कहा—"आप जो दण्ड देंगे, वह हमें स्वीकार है। कोई आपत्ति नहीं है।"

"तुम्हारे साथ आकर मैं तुम्हें घर छोड़ आऊँगा, यही दण्ड है।" युवराज ने कहा।

इतने में बाहर, घोड़ों की आहट सुनाई दी। वह झट मन्दिर के बाहर गई। उसने देखा कि सौ घोड़ों पर राजपूत योद्धा आ रहे थे। वे उसके ही लोग थे। वह युद्ध के काम पर ही विष्णुपुर गया था। उन लोगों के साथ पिता के पास आते हुये, रास्ते में वह उनसे अलग हो गया था। वे सब उससे फिर आ मिले थे।

उसके "दिल्ली बादशाह की जय," कहते ही एक घुड़सवार उसके पास आया "आपके लिए हमने बहुत खोजा। आखिर उस बड़ के पेड़ के पास आपका घोड़ा दिखाई दिया।"

"पास के गाँव से दो पालकियाँ और कहार लाने के लिए दो सिपाहियों को भेज दो और दो को यहाँ छोड़ दो। बाकी आगे चले जाओ।" जगतसिंह ने घुड़सवार से कहा। युवराज ने दो पालकियाँ मँगाई हैं, यह जानते ही कुछ राजपूतों को आश्चर्य हुआ और कुछ को हंसी आयी।

इस बीच तरुणी ने सेविका से पूछा—"विमला! क्यों नहीं मेरा राजकुमार से परिचय कराया!"

"क्यों नहीं कराया, यह आपके पिता के सामने ही बताऊँगी।" विमला ने कहा।

उन लोगों के साथ जो पालकी लाने आदमी भेजे गये थे, उन स्त्रियों के और वाहन आ गये। उनको देखकर, जगतसिंह ने मन्दिर में आकर कहा—"रक्षक सैनिकों ने पालकियाँ देखी हैं। बाहर आकर देखिये कि कहीं वे आपके लोग तो नहीं हैं।" विमला ने देखकर बताया—"ये हमारे ही लोग हैं।"

"तो यह ठीक नहीं है कि वे मुझे यहाँ देखें। एक सप्ताह तक किसी को न बताइये कि मैं आपको यहाँ दिखाई दिया था, मेरे दिल में तुम्हारी सखी का रूप जम-सा गया है। पर मैं आपके बारे में अधिक न जान सका।" जगतसिंह ने कहा।

"युवराज यदि मैं इनके बारे में नहीं बता रही हूँ, तो इसका कारण है। यदि जानने की इच्छा तब भी रही, तो पन्द्रह दिन बाद आप जहाँ चाहें, वहाँ मिलकर आपको सब बता दूँगी।" विमला ने कहा।

कुछ देर सोचकर उसने कहा—"उस दिन यहीं मिला जाये। यदि तब न मिल सके, तो फिर हम कभी भी न मिल सकेंगे।" उसने तरुणी की ओर एक बार देखा, फिर वह घोड़े पर सवार होकर चला गया।

[अभी है]

भाग्यहीन

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह फिर पेड़ के पास गया और पेड़ पर से शव उतारकर, कन्धे पर डाल, हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, मैं नहीं जानता कि तुम किस अपराध के कारण, इस आधी रात के समय यों कष्ट उठा रहे हो। परन्तु संसार में कुछ ऐसे भाग्यहीन भी हैं, जो बिना किसी अपराध के ही कठिन दन्ड भुगतते हैं, यह दिखाने के लिए, तुम्हें साकेत नामक व्यक्ति की कहानी सुनाता हूँ, सुनो।" उसने यूँ कहानी सुनानी शुरु की।

उशीनर देश में साकेत नाम का कसाई रहा करता था। उसके पास अच्छा बकरी का माँस मिलता था। इसलिए लोग

दूर दूर से आकर, उसके यहाँ से बकरी का माँस खरीदकर ले जाते थे। वह बकरी पालने में भी होशियार था—इसलिए उसका नाम भी होता और पैसे भी मिलते।

एक दिन, एक बूढ़ा, बिल्कुल नया चान्दी का सिक्का देकर, माँस खरीदकर गया। साकेत को वह सिक्का बहुत अच्छा लगा, उसने उसको एक अलग थैली में रखा। उसके बाद, वह बूढ़ा, रोज एक नया चान्दी का सिक्का देकर, माँस खरीदकर ले जाता।

साकेत के पास से, रईस हर साल बाजी के मेंढ़े खरीदा करते थे। सक्रान्ति त्यौहार से कुछ महीने पहिले ही साकेत गाँवों में घूम-घूमकर अच्छे मेंढ़े खरीदता, उनको खूब मोटा ताज़ा करके, अच्छे दामों पर बेचा करता।

जब उसने इस साल मेंढ़े खरीदने के लिए निकलना चाहा, तो उन नये सिक्कों को ले जाना चाहा। पर जब उसने थैली में हाथ रखा, तो उसके हाथ में सिक्के नहीं, ठीकरे आये। वह घबरा गया और उसने थैली उलट दी। थैली में ठीकरे ही ठीकरे थे। एक भी सिक्का न था।

यह सोच कि बूढ़े ने उसको धोखा दिया था, साकेत तिलमिला उठा। "फिर वह दिखाई देगा तो उसकी चमड़ी उखाड़ दूँगा।" जब वह यों कह रहा था, तो माँस खरीदनेवालों ने पूछा—"क्यों, क्या हुआ है? किसने तुम्हें धोखा दिया है?"

इतने में बूढ़ा ही माँस खरीदने के लिए आता हुआ दिखाई दिया। साकेत दूकान से बाहर कूदा और बूढ़े के पास भागा भागा गया। उसका गला पकड़कर चिल्लाने लगा—"दुष्ट कहीं का, चोर

कहीं का, मुझे धोखा देते थे!" उसने औरों को बुलाया।

बूढ़े ने धीमे से कहा—"चुप रहो। यदि तुमने मेरी बदनामी की, तो मैं तुम्हारा सर्वनाश कर सकता हूँ।"

साकेत ने गुस्से में, बूढ़े की बात की परवाह किये बिना कहा—"मेरा तुम क्या बिगाड़ सकते हो! धोखेबाज कहीं का!" वह और ज़ोर से चिल्लाया।

बूढ़ा ज़ोर से चिल्लाया, ताकि सब सुन सकें—"मैं तुम्हारा भेद जान गया हूँ। सोच रहे हो कि मैं किसी को नहीं बताऊँगा।"

"यह देखिये, यह तुमको धोखा देकर बकरी के माँस की जगह लाशों का माँस काट काट कर बेच रहा है। इस समय इस के घर एक लाश पड़ी है।" "झूट, बिल्कुल झूट, तुम इस बात को साबित करो।" साकेत ने कहा।

"क्या बिना साबित किये रहूँगा! और लोग भी तो तुम्हारी करतूत जानें। चलो, अपने घर चलो।" बूढ़ा पाँच दस आदमियों को साथ लेकर साकेत के घर गया। उसके घर के पीछे के कमरे में एक लाश पड़ी थी।

बूढ़ा एक मान्त्रिक था, यह कोई न जानता था।

उसको देखते ही केवल साकेत को ही आश्चर्य हुआ। बाकी सब क्रुद्ध हो उठे। सब ने उसको मिलकर खूब मारा पीटा। साकेत जब बेहोश हो गिर गया, तो उसके दुकान का सारा माँस लोगों ने धूल में मिला दिया। उस मार पीट में साकेत की जान तो नहीं गई, पर बायीं आँख चली गयी, जब उसे होश आया तो आस पास कोई न था। उसका घर, पैसा, सभी कुछ चला गया था।

यह सोच कि वह उस देश में जिन्दगी बसर नहीं कर सकेगा, वह एक और देश चला गया और वहाँ चप्पल सी-सा कर जैसे तैसे जीवन निर्वाह करने लगा। विशेष अभ्यास न था, पर पैतृक वृत्ति थी इसलिए उसका कुछ नाम हो ही रहा था कि एक और दुर्धटना हुई।

एक दिन साकेत, दुकान में बैठा बैठा चप्पल सी रहा था कि उसको बिगुलों का बजना और घोड़ों की आहट सुनाई दी। साकेत जब दुकान से बाहर यह देखने आया कि क्या बात थी, तो उसने देखा कि उस देश का राजा अपने नौकर चाकरों के साथ शिकार खेलने जा रहा था।

साकेत को देखते ही राजा ने आँखों पर हाथ रखकर कहा—"उस काने को सौ कोड़े मारकर इस देश से निकाल दो।" वह शिकार पर न जाकर घोड़ा मोड़कर अपने महल वापिस चला गया, तुरत सैनिकों ने साकेत को पकड़ लिया, उसके हाथ पैरों पर खूब कोड़े मारे—"देश छोड़ कर चले जाओ। नहीं तो, तुम्हें मौत की सज़ा मिलेगी।" उन्होंने कहा।

"आखिर, मैंने कौन-सा अपराध किया है, यह तो बताओ...." साकेत ने सैनिकों से पूछा।

"काने का दिखाई देना हमारे राजा, बड़ा दुश्शकुन समझते हैं। और अगर किसी की बाँयी आँख न हो, तो वे बिल्कुल बर्दाश्त ही नहीं कर सकते हैं।" सैनिकों ने साकेत से कहा।

राजा की आज्ञा के अनुसार साकेत वह देश छोड़ कर, एक और देश गया। वहाँ एक कोने में घर देख दालकर रहने लगा। वह घर छोड़कर, कहीं न जाता, सिर उठाकर किसी को न देखा करता। जब वह घर में यों रहने लगा, उसे लगा, जैसे उसका दम घुट रहा हो, उस में, पाँच दस आदमियों से मिल्कर, स्वतन्त्र रूप से हिलने मिलने की इच्छा प्रबल होने लगी।

एक दिन रात को, साकेत सिर पर एक दुपट्टा रखकर, गलियों में निकल पड़ा। वह कुछ दूर गया था कि पीछे से घोड़ों की आहट सुनाई दी, वह आहट सुनते ही, पगला-सा गया। यह सोच कि कोई राजा, अपने सैनिकों के साथ उसका पीछा कर रहा था वह डर के कारण, तेजी से

"तीन दिन से तुम हमारे मालिक को मारने के लिए, तलवार लेकर फिर रहे हो, जब जब हमने तुम्हें पकड़ने की कोशिश की, तब तब क्या तुम भाग नहीं निकले थे? ऐसा न दिखाओ, जैसे तुम्हें कुछ मालूम ही न हो।" उन मनुष्यों ने कहा।

"तुम कौन हो और तुम्हारा मालिक कौन है, यह भी मैं नहीं जानता हूँ।" साकेत ने कहा।

"अरे हमें क्या पागल समझ रखा है कि तुम्हारी झूटी बातों में यकीन करें? यदि तुम्हारा इरादा हमारे मालिक को मारने का नहीं था, तो इस समय यहाँ आकर, तुम क्यों छुपे? क्या तुम्हारे पास तलवार नहीं है?" यह कहकर जब नौकरों ने तलाशी ली तो उसके पास चमड़ा काटनेवाला चाकू मिला।

उसे देख, उनका सन्देह पक्का हो गया। वे साकेत को न्यायाधिकारी के पास ले गये। जब न्यायाधिकारी ने उसे देखकर, पूछताछ की, तो मालूम हो गया कि उसने पहिले कोड़े भी खाये थे। इसलिए उसने सुनवाई की भी जरूरत न समझी।

इधर उधर भागने लगा। उसने आकर, एक घर का दरवाजा धकेला। दरवाजा खुल गया। उसे अन्दर काली कोठरी-सी दिखाई दी। कुछ देर उस अन्धेरे में छुपने के बाद, साकेत ने घर जाने की ठानी।

परन्तु उसके कोठरी में घुसते ही, तुरत दो आदमियों ने उसे पकड़कर पूछा—"तो मिल गये दुष्ट! कबतक छुपे छुपे हमसे फिरते?"

साकेत ने मरते जीते पूछा—"क्यों भाई, मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? क्यों मुझे यों पकड़ा है?"

"यह तो पुराना कैदी मालूम होता है। इसे सौ कोड़े मारो और देश से निकाल दो। यही इसका दण्ड है।" न्यायाधिकारी ने कहा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा क्या कारण है कि निर्दोष साकेत को अपना पेशा छोड़ना पड़ा! क्यों उसे मारा मारा फिरना पड़ा! क्यों सारी दुनियाँ उसकी दुश्मन हो गई! क्यों वह निकम्मा बना दिया गया, क्यों उसे एक दण्ड के बाद एक दण्ड मिला!" इन सन्देहों का तुमने जानबूझकर निवारण न किया, तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"साकेत को ये कष्ट निष्कारण नहीं झेलने पड़े थे! उसने बलवानों का विरोध मोल लिया था। जब से उसने मान्त्रिक से दुश्मनी मोल ली थी तब से उसकी मुसीबतें शुरु हो गई थीं। जब वह जान गया था कि उसका उस आदमी से पाला पड़ा था, जो मिट्टी के ठीकरों को भी चान्दी के सिक्के बना सकता था, उसे सोच समझ कर, उसका मुकाबला करना था। साकेत ने ऐसा न करके, जल्दबाजी में उस पर हाथ उठाया। जो एक बार नष्ट हो जाता है, उसका विकास नहीं होता। साकेत को, जिसके पास स्थानबल न था हर छोटी-सी आफ़त, बड़ी-सी मुसीबत लगती थी। यदि उसके पास स्थानबल होता, तो उसको इतना दण्ड नहीं मिलता।"

राजा का इस प्रकार मौनभंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया, और फिर पेड़ पर जा बैठा।

इन्द्र की पत्नी

जब से त्वष्ट प्रजापति ने विश्वरूप की सृष्टि की तब से इन्द्र आदि देवताओं ने उसको अपना गुरु नियुक्त किया। दानव भी विश्वरूप की पूजा किया करते। वह जो कुछ यज्ञ भाग देवताओं से पाता, वह दानवों को भी दिया करता। यह इन्द्र न देख सका। उसने विश्वरूप को मार दिया। इस पर त्वष्ट इन्द्र से नाराज हुआ और इन्द्र को मारने के लिए उसने हवनकुण्ड में से वृत्रासुर की सृष्टि की। वृत्र ने ब्रह्मा की प्रार्थना करके, अच्छे अच्छे वर प्राप्त किये। फिर इन्द्र वृत्र से युद्ध करके हार गया और भाग गया। "वृत्र को चालाकी से मारना होगा। अभी उससे शत्रुता न करके, मित्रता से रहो।" विष्णु ने इन्द्र को सलाह दी। मुनियों ने इन्द्र और वृत्र की दोस्ती करवायी। उसके बाद वृत्र जब शक्तिहीन था, इन्द्र ने उसको वज्रायुध से मारा।

वृत्रासुर के मर जाने के बाद इन्द्र समझने लगा कि चौदह लोकों में उससे अधिक शक्तिशाली न था। चूँकि उसने ब्रह्मा से वर पाये हुए वृत्र को ही मार दिया था, इसलिए वह ब्रह्मा से भी बड़ा था। इन्द्र ने देवताओं की एक सभा बुलाकर कहा—"अब से मैं तुम सब का अधिपति हूँ। तुम्हारे यज्ञ भाग मेरे पास ही पहुँचने चाहिए। उसको एक पात्र में रखा जायेगा। मेरे लेने के बाद ही और ले सकेंगे। अब से मैं ब्रह्मलोक में रहूँगा।"

देवता एक दूसरे का मुख देखने लगे। बृहस्पति ने इशारा किया कि वे इन्द्र का

विरोध न करें। यह सोच कि देवताओं ने उसकी आज्ञा मान ली है, इन्द्र सन्तुष्ट हो, ब्रह्मलोक चला गया।

इन्द्र ब्रह्मा के पास गया तो, पर उसको नमस्कार किये बगैर ही उसने कहा—अरे जड़ब्रह्मा, तुम्हारे कारण वृत्रासुर बलवान बना और उसने सारे लोकों को डरा दिया। आखिर मुझे उसे मारना पड़ा और सबको कष्टों से विमुक्त करना पड़ा। तुम जैसे किसी काम के नहीं रहे। तुम अपनी पदवी मुझे देकर, चले जाओ। कम से कम लोग यह तो कहेंगे कि तुमने मेरी शक्ति को स्वीकार किया।"

"मुझे तुम्हारी शक्ति का आदर करने में कोई आपत्ति नहीं है। पर अपना स्थान छोड़कर जानेवाला मैं कौन हूँ! सब क्या कहेंगे!" ब्रह्मा ने कहा।

"शायद तुम नहीं जानते तुम कौन हो। ऐसा व्यक्ति कहीं भी रहे, तो क्या है! तुम्हारे बारे में कोई क्या सोचे, इससे मुझे क्या! आज से, सब लोकों का, अधिपति देवेन्द्र हैं" कहकर, इन्द्र निकल पड़ा और ब्रह्मलोक के उद्यान में प्रविष्ट हुआ। इस उद्यान में एक पेड़ के नीचे इन्द्र को एक सुन्दरी दिखाई दी। जब इन्द्र ने उससे पूछा कि वह कौन थी, उसने कहा कि वह ब्रह्मा की लड़की थी।

"जानती हो मैं कौन हूँ! बहुत बड़ा हूँ। मैंने उस वृत्रासुर को मार दिया है, जिसने त्रिमूर्तियों को भयभीत कर दिया था और इस तरह मैंने देवताओं का भय हटा दिया है। तुम्हारे पिता ने मुझे यह लोक दे दिया है। इसलिए मुझ से विवाह कर लो, मुझ-सा कहीं कोई और नहीं मिलेगा।" इन्द्र ने उससे कहा।

उसने एक पत्र पर कुछ लिखा उसे मोड़ा और उसके हाथ में देते हुए कहा—"मैं दो बातें पूछ रही हूँ। पहिले उसका उत्तर दो। उसके बाद, इस पत्र को खोलकर पढ़ो।"

इन्द्र ने कुतूहलवश कहा—"पूछो, क्या पूछना है?"

"क्या तुम मुझ जैसी स्त्री को बना सकते हो?" उसने पूछा।

"यदि हम दोनों ने विवाह कर लिया तो क्या तुम सी लड़की नहीं पैदा होगी?" इन्द्र ने कहा।

"वह तुम अकेले तो नहीं बनाओगे! अच्छा, क्या तुम वृत्रासुर को फिर बना सकते हो?" उसने पूछा।

"छी, छी, उस जैसे को क्यों बनाया जाय?" इन्द्र ने कहा।

"खैर! क्या तुम वृत्रासुर का फिर संहार कर सकते हो?" उसने पूछा।

"मुझ से मजाक कर रहे हो? मुझे क्या समझ रखा है?" इन्द्र आगबबूला हो उठा।

"मजाक नहीं कर रही। वृत्रासुर यहीं है। वृत्र, इधर एक बार तो आओ।" उसने पुकारा। वृत्रासुर पर्वताकृति में वहाँ आ खड़ा हुआ। इन्द्र ने वज्रायुध से वृत्रासुर को मारा। पर उसकी चोट वृत्रासुर को नहीं लगी। वह हँसा। इन्द्र का मुँह छोटा-सा हो गया। उसने उसकी दुस्थिति देख कर, हँसते हुए कहा—"तुम अब इसे नहीं मार सकते। तुम्हारे हाथ मर कर, मुक्ति पाकर, अब यह इस लोक में आ गया है।" फिर उसने वृत्र को भेजकर, इन्द्र से पूछा—"क्या तुम इस जैसे को बना सकते हो?"

"तुम मेरा अपमान कर रही हो" इन्द्र ने उससे कहा।

"नहीं तो, चूँकि तुमने मुझसे शादी करनी चाही थी; इसलिए यह बात पूछी है। पत्र खोलकर, पढ़ो।" उसने कहा।

इन्द्र ने पत्र खोलकर पढ़ा—"मैं अपने पिता से अधिक शक्तिशाली से विवाह नहीं करूँगी।"

"इसीलिए तुम्हारी परीक्षा ली थी। ब्रह्मा ने मेरी संकल्प मात्र से सृष्टि की थी। वृत्रासुर में जो शक्ति थी, वह भी उनकी दी हुई थी। वह उस जैसे कितनों को ही बना सकते हैं। चूँकि, तुमने कहा था कि तुम ब्रह्मा से भी अधिक शक्तिशाली हो, इसलिए ही मैंने परखना चाहा था, सौभाग्यवश, तुम ब्रह्मा से अधिक बड़े और शक्तिशाली नहीं हो। इसलिए मैं तुम से शादी कर सकती हूँ।"

वह इन्द्र को लेकर, ब्रह्मा के पास गई। इन्द्र ने ब्रह्मा को नमस्कार किया। ब्रह्मा ने उन दोनों का विवाह करके, उनको आशीर्वाद देकर भेज दिया। इन्द्र अपनी पत्नी के साथ स्वर्ग वापिस चला गया। देवताओं की सभा करवाई। उसने वह महापात्र मंगवाया, जिसमें यज्ञ भाग रखा जाता था। देवताओं ने लाकर महापात्र इन्द्र के सामने रखा।

बृहस्पति ने इन्द्र से कहा—"महेन्द्र! क्योंकि तुम हमारे प्रभु हो, हमने बिना तुम्हारी आज्ञा के यज्ञ भाग न लेकर, इस पात्र में ही रखा। बिना उसके हमारा बल कम हो रहा है। इसलिये हमारा यज्ञ भाग हमें दे दो।"

इन्द्र ने हँसकर कहा—"पहिले इस पात्र को मेरे अन्तःपुर में रखवाओ।" परिचारिकाओं ने उस पात्र को ले जाकर, इन्द्र के अन्तःपुर में रख दिया।

इन्द्र अपनी पत्नी के साथ अन्तःपुर में गया। उसने कहा—"देखा हमारा वैभव? कितना श्रेष्ठ यज्ञ भाग, इस महापात्र में है। इस में से जितना तुम चाहो, ले लो और बाकी मेरे लिए रखो।"

"यह सब देवताओं को समर्पित किया गया था न? यदि इसे हम दोनों ने ले लिया, तो और देवता अपना काम कैसे करेंगे?" इन्द्र की पत्नी ने पूछा।

"जब मैं आज्ञा दूँगा, तो उनको कार्य करना ही होगा।" इन्द्र ने कहा।

"यदि यह सब मैंने खालिया, तो क्या सब काम मुझे ही करने होंगे?" पत्नी ने उससे पूछा।

"नहीं तो। इस यज्ञ भाग पर तुम्हें अधिकार दे दिया है, तुम सुख से रहो।" इन्द्र ने कहा।

इन्द्र की पत्नी ने यह सुनते ही, सब देवताओं को बुलाकर कहा—"इस पात्र में जो यज्ञ भाग है आप उसमें से अपना अपना हिस्सा ले लो।" इन्द्र कुछ न कह सका। इन्द्र की पत्नी की कृपा के कारण, देवता, अपना यज्ञ भाग इन्द्र को न देकर स्वयं लेने लगे। इस तरह पुरानी व्यवस्था फिर चलने लगी।

सन्देह

विन्ध्या पर्वतों में एक मुनि भगवान का ध्यान करता, रहा करता था। जब लोगों को मालूम हुआ कि एक गुफ़ा में एक सन्यासी रह रहा था तब से वे झुन्ड बनाकर पहाड़ पर आने लगे। जब वे अपने कष्ट सुख बताते, उनको लगता, जैसे उनकी कठिनाइयाँ कम हो गई हों और साधु की अच्छी सलाह सुनकर, जो दुखी आते वे सन्तुष्ट हो जाते।

लोगों के कष्ट सुन सुनकर साधु के मन में सन्देह होने लगे—"मैंने कुछ शास्त्र पढ़े हैं और जन वाक्य कुछ और है। एक दूसरे का कोई सम्बन्ध ही नहीं है। धर्म का नाश होता है, अधर्म की विजय होती है। भगवान, स्वर्ग, नरक ये सब धोखाधड़ी है। इसलिए जब तक मैं दुनियाँ में जाकर सच और झूट नहीं मालूम कर लेता हूँ, तब तक मुझे मनःशान्ति नहीं होगी।" यह सोच, दुनियाँ देखने वह अपनी गुफ़ा से निकल पड़ा।

जीवन से विरक्त स्वामी, डण्डा और कमण्डल लेकर जब कुछ दूर गया तो उसे बारह वर्ष का प्यारा प्यारा लड़का दिखाई दिया। जब दोनों ने एक दूसरे से कुशल प्रश्न पूछे तो मालूम हुआ कि दोनों एक ही जगह जा रहे थे।

स्वामी यह जानकर बड़ा प्रसन्न था कि उसको अनायास रास्ते में एक साथी मिल गया था।

जब दोनों यूँ मिलकर जा रहे थे तो उनको एक गाँव के बाहर, कुछ सेवकों ने

देवव्रत

उनका स्वागत किया और उनको एक भव्य भवन में ले गये। उस घरवालों ने इनको बड़ी दावत दी।

लड़के को साथ लेकर मालिक से बिदा लेकर, अतिथि फिर निकले।

उनके घर से निकलते ही उस भव्य भवन में हो हल्ला शुरु हुआ, मालिक का सबसे अच्छा सोने का कटोरा नहीं दिखाई दे रहा था।

कटोरी किसी और ने नहीं चुराई थी, जैसे सबका सन्देह था, उस लड़के ने ही चुराई थी।

स्वामी ने भी देखा था कि भोजन करते करते उस लड़के ने ही कटोरी छुपा ली थी। स्वामी को यह जानकर बड़ा दुःख हुआ कि उस लड़के ने उस घर में ही चोरी की जिसने उसको आतिथ्य दिया था। परन्तु उसने उससे मुख खोलकर यह नहीं कहा—"क्यों, यह तुमने क्या किया!"

स्वामी और लड़के जा रहे थे कि रास्ते में बादल छा गये और जोर से वर्षा हुई। दोनों भीग गये। थोड़ी दूरी पर उनको एक दीया टिमटिमाता दिखाई दिया। दोनों धीमे धीमे वहाँ पहुँचे।

"कौन है भाई, भीग गये हैं। हमें छत के नीचे खड़े होने दो। दो प्राणियों को बचाकर पुण्य कमाओ।" वे यों मनाते किवाड़ खट खटाने लगे।

थोड़ी देर में खिझते खिझते नौकर ने किवाड़ खोले और दोनों को मालिक के सामने ले गया।

"आधी रात के समय भीख क्या! क्यों ऐसे आदमी को अन्दर लाये, तुम्हें समझ नहीं है!" उस लोभी मालिक ने नौकर को डाँटा डपटा।

आखिर मालिक ने जैसे भी हो, बाहर रखे झूटे बर्तनों में से खरोंच खरोंच कर जो कुछ मिले उसे खाने के लिए कहा। "बारिश जब थम जाये तो उन्हें भेज देना, आजकल किसी का विश्वास नहीं किया जा सकता।" उसने नौकर को आगाह किया।

बालक बर्तनों का बचा खुचा भोजन स्वामी को देकर, स्वयं भूखा रहा। कुछ देर में बारिश बन्द हुई।

नौकर के कहने से पहिले ही, अतिथियों ने कहा कि वे जा रहे हैं और वे अपने रास्ते पर चल पड़े।

परन्तु दरवाजे से निकलने से पहिले बालक ने चुराई हुई, सोने के कटोरे को नौकर के हाथ में रखकर कहा—"भाई तुमने बेवक्त हमें पनाह दी। हमारे प्राण बचाये। हमें, अपने मालिक से कहकर, खाना भी दिलवाया। आपने जो उपकार किया है, उसका ऋण हम कई जन्मों में भी नहीं उतार सकते। चूँकि आप जैसे पुण्यात्मा कभी कभी कहीं हैं इसलिये ही यह संसार चल रहा है। खैर, फिर भी यह रहा कटोरा, इसे अपने मालिक को दे देना।"
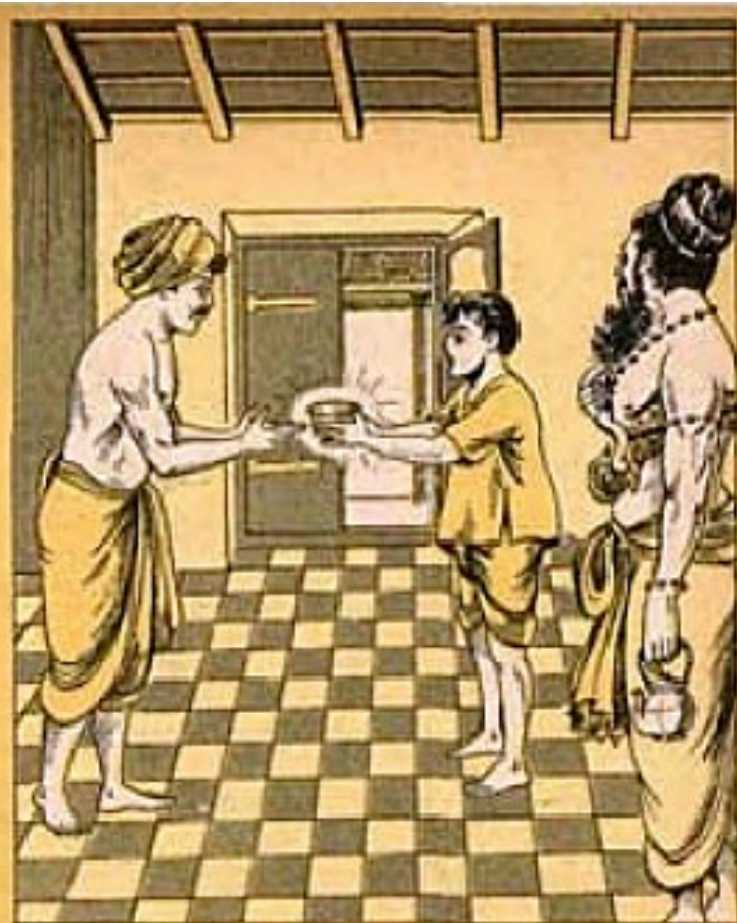
लड़के का काम, स्वामी को बिल्कुल पसन्द न आया। उसे बड़ा गुस्सा आया। उसने उसे खूब फटकारना चाहा। परन्तु उसे मुख खोलकर कुछ भी न कह पाया।

लड़के ने कहा—"बाबा, यह सब, तुम्हें विचित्र लग रहा है न! यह सब माया नाटक है। हम दोनों इस में हैं।" वह हँसा।

"मैंने सोचा था कि तुम प्यारे लड़के हो। मैंने सोचा था कि तुम्हारे साथ से,

मेरे कुछ सन्देह दूर हो जायेंगे।" स्वामी ने कुछ कहना चाहा।

तब लड़के ने कहा—"तुम्हारे सन्देह दूर करने के लिए ही आया हूँ।"

फिर उसने यों बताया,—"जिसने हमें आतिथ्य दिया था, वह यश के लिए, आडम्बर करके, कर्ज के कारण, अपने को तबाह कर रहा है। जब उसे मालूम होगा कि उसका प्यारा प्याला नहीं दिखाई दिया है, तो वह सुधर जायेगा। इसतरह मैंने उसके परिवार को बचा दिया।"

"ठीक है। परन्तु उस पात्र को, तुमने अपात्र को क्यों दान दिया!" स्वामी ने पूछा।

तब बालक ने कहा—"यही गलती है, यह मालिक सिर्फ पैसे जोड़ना ही जानता था। किसी को देना नहीं जानता था, हमारे दिये हुई प्याले के कारण, उसका दिल बदल जायेगा। अरे, यूँहि झूटा खिलाने से ही, हमें इसतरह का उपहार मिला है यदि पेट भर खाना खिलाता तो कितना बढ़िया उपहार मिलता!" वह पुण्य कार्य करने लगेगा। उसके दान करने से, उसका जमा जमाया हुआ धन समाज के हित केलिये उपयुक्त होगा।"

"मेरे सन्देह दूर हो गये हैं। धन्य हूँ।" स्वामी के यह कहते ही बालक के मुँह पर कुछ कान्ति हुई। ऐसी ध्वनि हुई, जैसे कोई विमान उतर रहा हो, फिर वह अन्तर्धान हो गया।

स्वामी सन्तुष्ट हो, फिर अपनी गुफा में चला गया।

फैसला

एक गाँव में एक भूस्वामी था। उसके दो लड़के थे। वे दोनों हमेशा, छोटी छोटी बात पर झगड़ा करते। यह सोच कि मेरे मरने के बाद, ये लोग जमीन जायदाद के बँटवारे के लिए बहुत लड़ेंगे, उसने बुढ़ापे में ही उन दोनों में बराबर अपनी सम्पत्ति बाँटने की सोची। जो कुछ उसका था, उसने उन दोनों को बराबर दे भी दिया, वे भी सन्तुष्ट थे। परन्तु एक हीरा बाकी रह गया था।

यह हीरा उनके वंश में कई पीढ़ियों से चला आ रहा था। यह बड़े लड़के को मिलता आया था। इसे बेचा नहीं जा सकता था। दान भी नहीं दिया जा सकता था। इसलिए भूस्वामी ने उसे अपने बड़े लड़के को देने की ठानी। परन्तु दूसरा लड़का इस के लिए नहीं माना। "उसे मुझे ही दीजिये। मैं ही उसे दूसरी पीढ़ी को दे दूँगा।" पर बड़ा लड़का नहीं माना। दोनों में झगड़ा हुआ। उनका झगड़ा निबटाने के लिये पिता ने एक शर्त लगाई "तुम दोनों जाओ और जिस विद्या में तुम प्रवीण होना चाहो, उसमें प्रवीण होकर आओ। तुम दोनों में जिसकी प्रवीणता अधिक होगी, उसे ही यह हीरा मिलेगा।"

दोनों भाई अलग अलग दो देश गये। पाँच वर्ष में, बड़ा लड़का ज्योतिष में बड़ा निपुण हो गया। दूसरा लड़का रण विद्या में प्रवीण हो गया। पाँच साल पूरे होते ही वे दोनों घर वापिस आ गये।

पर जब वे घर पहुँचे तो घर में सब परिस्थितियाँ बदल गई थीं। उनके आने

सन्तोषकुमार

से कुछ दिन पहिले ही डाकू आये और घर में रखी सभी चीज़ें, हीरा भी, उठा कर ले गये। भूस्वामी ने चिन्ता में चारपाई पकड़ी। वह उस हालत में न था कि निर्णय कर सके कि उसके लड़कों में किसकी प्रवीणता अधिक थी।

बड़ा लड़का चूंकि ज्योतिष में निपुण था। इसलिए उसने यह मालूम करके कि डाकू, कब, किस दिन, किस समय आये थे, बताया—"ये डाकू ईशान्य दिशा से, एक जंगल से आये हैं। वहाँ पिशाच रहते हैं। ऐसा लगता है, डाकुओं का उन पिशाचों पर अधिकार है। इस सब को देखते हुए, मुझे आशा नहीं है कि हमें हमारी चीज़ें फिर वापिस मिलेंगी।"

पर छोटे लड़के ने जो रण विद्या में प्रवीण था, इतनी आसानी से बात न छोड़नी चाही। वह अपने भाई की बात का विश्वास करके, ईशान्य दिशा की ओर चल पड़ा। जाते जाते एक जंगल आया। उस प्रान्त के लोगों ने बताया कि वहाँ ब्रह्मराक्षस रहा करते थे। उसने सोचा कि वहीं ही चोर होंगे और चोरी का माल भी वहीं होगा।

यह सुनकर भी कि जंगल में जाना खतरनाक था और कई जाकर अपने प्राण खो चुके थे, वह न डरा। यदि पिशाचों का ही भय हो, डाकू उस जंगल में कैसे रह रहे हैं। जो काम डाकू कर सकते हैं, क्या मैं नहीं कर सकता! यदि डाकुओं से ही खतरा है, तो मेरे पास तलवार है ही। डाकुओं को मारने के लिए ही तो आया हूँ। उस हालत में डाकुओं से डरकर जंगल में न जाने का क्या मतलब है!

जंगल में पहिले तो कुछ नहीं दिखाई दिया। फिर कुछ अजीब आवाज़ें सुनाई पड़ने लगीं। छोटे ने उसकी भी परवाह न की, थोड़ी देर में उसको विचित्र पिशाच दिखाई देने लगे। जब जब उसने तलवार लेकर उनको मारना चाहा, तो वे गायब हो गये।

"पिशाचो, तुम्हारी दाल मेरे सामने नहीं गलेगी। यह बताओ कि इस जंगल में डाकू कहाँ रहते हैं। नहीं तो, मैं तुम्हें तलवार से मार दूँगा।" तुरत पिशाच चम्पत हुए। फिर वे नहीं दिखाई दिये। उनकी ध्वनि भी नहीं सुनाई दी।

छोटे भाई को भूख लगी। यह सोच कि उसको तात्कालिक रूप से पिशाच छोड़ गये थे, वह एक पेड़ के नीचे बैठ गया, तलवार पास में रखकर, जो पोटली वह साथ लाया था, उसे खोलकर उसमें से खाना लेकर खाने लगा। उस समय एक पिशाच धीमे धीमे पीछे से वहाँ आया और उसके पास की तलवार उठाकर, उसने अपने सरदार को दे दिया।

"तलवार नहीं है। इसलिए यह आदमी अब हमारा कुछ नहीं बिगाड़

सकता। हम उसे देख नहीं डरेंगे, वह ही हमें देखकर डरेगा।" पिशाचों के सरदार ने कहा।

छोटे ने खाना खाकर देखा कि उसकी तलवार नदारद थी। वह जान गया कि पिशाचों की ही यह करतूत थी। उनको धोखा देने के लिए वह जंगल से इस तरफ़ आ गया।

जब पिशाचों ने उसे जाता देखा, तो विजयगर्व से वे उछलने कूदने लगे।

अन्धेरा हुआ। पिशाच तरह तरह के वेष पहिनकर नाचने लगे। पिशाचों को

यह न सूझा कि जो दिन में ही उनसे डरकर चला गया था, वह रात को अन्धेरे में उनके रहने की जगह पर आयेगा। परन्तु छोटा, काला कपड़ा ओढ़कर उनके पास आया। पिशाच उसकी तल्वार एक दूसरे को देकर बड़े मजे में नाच रहे थे। छोटे ने भी कुछ समय तक उनके साथ नृत्य किया। फिर उसके हाथ में भी तल्वार आ गई। तल्वार लेकर वह पिशाचों के सरदार पर उछला, उसकी दाढ़ी हाथ से पकड़ी और तल्वार की एक ही चोट से दाढ़ी साफ़ कर दी।

तुरत पिशाचों का सरदार जोर से चिल्लाया "अरे....अरे मेरे बाल!" पिशाच चिल्लाये। क्यों पिशाच यों भाग गये थे, वह न जान सका पिशाचों के सरदार ने हाथ जोड़कर कहा—"मेरी दाढ़ी मुझे दे दो। डाकुओं का सरदार, मेरे दाढ़ी का एक बाल लेकर, हम सबको गुलाम बनाये हुए है। हमें बुरी तरह सता रहा है और तुम्हारे हाथ में तो इतने सारे बाल हैं। हमारी जान तो गई।"

"मैं तुमको गुलाम नहीं बनाना चाहता। मैं सिर्फ़ यही जानना चाहता हूँ कि ये डाकू रहते कहाँ हैं। यदि तुमने मुझे एक बार दिखाया, तो मैं तुमको उन चोरों के अत्याचार से छुड़ा दूँगा। इसलिए तुम मेरी ज़रा इतनी मदद करो, उसके बाद तुम पर हुक्म चलानेवाला कोई न रहेगा।" छोटे ने पिशाचों से कहा।

रात को डाकू चोरी के लिए गये हुए थे। सवेरे ही आयेंगे। सरदार को मिलाकर दस चोर थे। यह कहकर, पिशाचों का सरदार छोटे को चोरों के मुग़ह के पास ले गया। छोटा वहाँ एक पेड़ के पास छुपकर खड़ा हो गया।

सवेरा होते होते चोर चोरी का माल लेकर आये। भूमि में उन्होंने गुप्त द्वार खोला। सीढ़ियाँ उतरकर वे नीचे चले गये। जब वे चोरी का माल रखकर ऊपर आ रहे थे, तो छोटे ने एक एक की गर्दन काट दी।

इस तरह दसों डाकुओं के मरने के बाद छोटा भूगृह में गया और वहाँ की धनराशि उसने देखी। वहाँ उसकी सब चीज़ें थीं, हीरा भी था। फिर उसने राजा के पास आकर कहा कि उसने डाकुओं को मार दिया था और वह वह जगह भी दिखाने को तैयार था, जहाँ उन्होंने चोरी का माल छुपा रखा था। उनमें से वह अपनी चीज़ें ले लेगा, बाकी चीज़ें जिन जिनकी हों, उनको दे देने के लिए उसने राजा से कहा।

सैनिक उसके साथ गये। भूगृह में जितना माल था, उस सबको राजमहल में पहुँचा दिया। राजा की अनुमति पर छोटा, अपनी चीज़ें लेकर अपने घर चला गया।

चोरी गया माल फिर मिलते ही भूस्वामी की हालत सुधर गई और वह उठकर बैठ गया, उसने अपने लड़कों को बुलाकर कहा—"परन्तु यह हीरा किसको दिया जाय? यह झगड़ा तो न निबट सका।"

"इसमें झगड़े ही क्या बात है! यह बड़े भाई को ही मिलना चाहिए। यही होता भी आया है, भाई के पास ही इसे रहने दो।" छोटे ने कहा। विद्याओं को सीखकर वह कामयाब हो गया था, इसलिए उसका दृष्टिकोण भी बड़ा हो गया था।

सिर न झुकानेवाला

भीमसिंह बड़ा रईस था। उसकी सत्यवती नाम की एक लड़की थी। क्योंकि सिवाय उस लड़की के, उसकी कोई सन्तान न थी इसलिए उसने उस लड़की के लिए योग्य वर खोजकर, दामाद को अपने घर रखकर उसे अपने बाद, अपनी सम्पत्ति देने का निश्चय किया। यह कोई बड़ी इच्छा न थी। पर उसे पूरा करना भी असम्भव हो गया।

कारण यह था कि भीमसिंह की पत्नी रामधारी बड़ी चुड़ैल थी। भले ही भीमसिंह की ख्याति, प्रतिष्ठा, बाहर कुछ भी हो, पर उसके सामने वह भीगी बिल्ली बन जाता था। वह किसी की न सुना करती। सब को उसकी बात सुननी पडती थी। यही उसका रवैय्या था। यदि पति कभी कुछ अपनी तरफ़ से करता, तो वह गुस्से में महाकाली हो जाती, वह अपने दामाद को भी उसी तरह दाबकर रखना चाहती थी।

परन्तु सत्यवती के लिए योग्य सम्बन्ध न आये। जो कोई उसकी माँ के बारे में जानते थे, वे उस से शादी करने के लिए नहीं माने। ससुराल में रहने के लिए तो बिल्कुल माने ही नहीं। और अगर पैसे के लालच में कोई आया भी, तो वह रामधारी को नहीं जँचा।

उसने शादी के एक दलाल से कहा—"आपको लड़की के लिए कहीं अच्छा सम्बन्ध मिले, तो बताना। यह जरूरी नहीं है कि लड़के के पास कोई मिल्कियत हो। पर लड़की के लिए अच्छा जोड़ा हो। यह भी जरूरी है कि लड़का हमारे पास रहे और हम जैसा कहें, वैसा करे।"

विद्यासागर

शादी का दलाल जगह जगह घूमा। पर उसे कोई योग्य सम्बन्ध नहीं मिला। जब वह एक गाँव से दूसरे गाँव जा रहा था, तो रास्ते में, उसको एक पीपल के पेड़ के नीचे, एक नवयुवक बैठा दिखाई दिया। उसकी उम्र कोई बीस साल की होगी। पर वह बड़ा ठिगना था।

"क्यों बेटा! तुम कौन हो? क्यों, यों दुखी बैठे हो?" शादी के दलाल ने उस लड़के से पूछा।

इस पर उस लड़के ने कहा—"मेरा नाम चम्मचलाल है। यहीं पास के गाँव में रहता हूँ। मेरे पिता का नाम गरुड़लाल है। मेरे पिता मुझे देखकर हमेशा चिड़चिड़ाते रहते हैं। "इस नाटे को कोई अपनी लड़की नहीं देगा। यह निकम्मा है।" हमेशा डाँटते रहते हैं। उनकी डाँटडपट सुनते सुनते मैं ऊब गया हूँ। इसलिए मैं घर से चला आया हूँ। कहीं जाकर अपना पेट पाल लूँगा।"

"अरे, तुम हो गरुड़लाल के लड़के चम्मचलाल। देखें, तो तुम्हारा हाथ।" शादी का दलाल उसका हाथ यों देखने लगा, जैसे वह हस्त ज्योतिष जानता हो। "अरे, तुम्हारा पिता कितना पागल है। तुम तो रईस घर में जमाई बनोगे। अच्छा खासा धन योग है। सब तुम्हारे सामने सिर झुकायेंगे। मेरे साथ आओ।"

यह सुन चम्मचलाल बड़ा खुश हुआ। शादी का दलाल, उसे भगवान-सा लगा। दोनों मिलकर चल पड़े। रास्ते में शादी के दलाल ने चम्मचलाल को एक सलाह दी। "जब तक कोई तुम्हारी ऊँचाई तक झुक कर न बात करे, तब तक जवाब न देना।"

उस लड़के को अपने घर में रखकर, रामधारी के पास जाकर उसने कहा—

"लड़की के लिए बढ़िया वर लाया हूँ। लड़के में बस, एक ही खराबी है। ज़रा ठिगना है।"

"क्या हुआ। अगर ठिगना है। बहुत अच्छा है। जो कुछ कहा जायेगा, वैसे ही करेगा।" रामधारी ने कहा।

"ठीक कहा, पर एक बात है। जब तक हम झुककर बात नहीं करते तब तक वह जवाब नहीं देता। ठिगना है न!" शादी के दलाल ने कहा।

"इस में क्या है यह तो कोई बड़ा काम नहीं है। उसी तरह बात करेंगे।" रामधारी ने सन्तुष्ट होकर कहा। उसे देखा भाला गया। शादी भी हो गई और विवाह की वेदिका पर ही, रामधारी ने, दामाद पर रौब जमाना चाहा। परन्तु उसने उसकी परवाह न की। जब तक उसने झुककर बात न की, उसने जवाब भी न दिया। विवाह होते ही, वर-वधु को मन्दिर में ले गये।

रास्ते में रामधारी ने शादी के दलाल से कहा—"क्या, दामाद से हमेशा झुककर ही बात करनी होगी! बड़ी तकलीफ़ हो रही है।"

इतने में सब मन्दिर के द्वार के पास पहुँचे। द्वार बड़ा छोटा और नीचा था। सब तो सिर झुकाकर, अन्दर गये, पर चम्मचलाल, बिना सिर झुकाये ही अन्दर चला गया।

"देखा....! वह भगवान के सामने ही सिर नहीं झुकाता है। क्यों हमारे सामने झुकायेगा!" शादी के दलाल ने कहा। यह सुन रामधारी के मुँह पर ताला पड़ गया।

सत्यप्रिय की सूझ

चित्रपुर के भाग देवी के मन्दिर में सत्यप्रिय पूजारी था। वह, यदि किसी में झगड़ा होता, तो दोनों पक्षों में बीच बचाव करता, दोनों को सन्तुष्ट करके शान्त करता, इस तरह के कार्य करने के बाद वह कभी भी प्रतिफल की आशा नहीं करता।

उसकी प्रसिद्धि उस राज्य के राजा के पास भी पहुँची। राजा, मन्त्री से सलाह करके एक दिन वेष बदलकर मन्दिर में गया। वहाँ पूजा करवाकर, पूजारी से कुशल प्रश्न करके वे चले आये।

उस गाँव के लोग पास के जंगल से लकड़ियाँ काटकर लाया करते थे। एक दिन जब एक आदमी लकड़ी काटकर ला रहा था, तो उसको एक पेड़ के नीचे एक ज्योतिषी दिखाई दिया। उस आदमी ने अपना हाथ बढ़ाकर अपना भविष्य पूछा। तब ज्योतिषी ने कहा—"भाई, मैं अपने प्रभाव से, तुम्हारी आँखों को एक दृश्य दिखाता हूँ। यदि तुम उसका ठीक जवाब दे सके, तो तुम्हारा भविष्य बताऊँगा।" वह आदमी इसके लिए मान गया।

देखते देखते उसकी आँखों के सामने एक चमचमाता राजमहल आया।

इतने में आकाश में बिजलियाँ कड़कने लगीं और मूसलधार वर्षा होने लगी। वह राजमहल धराशायी हो गया।

"इसका क्या अर्थ है!" ज्योतिषी ने पूछा।

"नहीं मालूम आप ही बताइये।" उस आदमी ने कहा।

रामानन्द

"तो यही तुम्हारा भविष्य है।" यह कहते हुए ज्योतिषी ने उसको शिला बना दिया। थोड़ी देर बाद जंगल आते हुए एक और आदमी ने अपना हाथ बढ़ाकर अपना भविष्य पूछा।

बातों बातों में ज्योतिषी ने दूसरे आदमी को यह दृश्य दिखाया। हज़ार फीट ऊँचा वृक्ष वहाँ पर झट उग आया। उस पेड़ पर एक बड़ा बाज़ आया और वहाँ टहनियों पर बैठे बैठे छोटे छोटे पक्षियों का शिकार करने लगा। फिर वह दृश्य चला गया।

ज्योतिषी ने इसका अर्थ पूछा। उस आदमी ने कहा—"मुझे नहीं मालूम है, तुम ही बताओ।"

वह भी शिला बन गया।

थोड़ी देर बाद जंगल आते हुए, तीसरे आदमी ने भी हाथ बढ़ाकर अपना भविष्य पूछा। उन दोनों शिलाओं को दिखाकर ज्योतिषी ने अपनी समस्या व्यक्त की। इसके लिए तीसरा व्यक्ति मान गया।

उसको एक बूढ़ा दिखाई दिया। उसकी पीठ पर बड़ा-सा गट्ठर था, जिसे वह उठा नहीं पा रहा था। फिर भी वह पेड़ों के नीचे की लकड़ियाँ चुन रहा था। वह बूढ़ा चलता चलता यकायक गिर गया। तुरत वह दृश्य समाप्त हो गया।

इसका अर्थ भी तीसरा व्यक्ति पहले दोनों की तरह न कह पाया। इसलिए वह भी शिला बन गया।

पास ही चौथे लकड़हारे ने यह सब देखा। वह डरकर भाग गया। जल्दी ही अफवाह फैल गई कि कोई मान्त्रिक पेड़ के नीचे बैठकर भविष्य बताने के बहाने सबको पत्थर बना रहा था। जो उनमें साहसी थे, वे जल्दी जल्दी उसके

पास गये। पूछा—"तुम कौन हो? क्या बात है?"

उसने कहा—"मैं भविष्य बतानेवाला हूँ। दृश्य दिखाकर अर्थ पूछता हूँ। जो ठीक बता देते हैं, उनको भविष्य बताता हूँ। जो नहीं बता पाते, वे इस तरह शिला बन जाते हैं।" उसने तीनों शिलायें उन्हें दिखाईं।

सब डर गये तथा पीछे हट गये। उन तीनों के भाई बन्धु, जो लकड़ी के लिए गये थे, भागे भागे सत्यप्रिय के पास गये।

"मैं देख लूँगा।" कहकर सत्यप्रिय ने उनको भेज दिया, अगले दिन वह ज्योतिषी के पास गया।

"महानुभाव! आपके कारनामे देखकर हमारे गाँव के सब लोग डर रहे हैं। इन शिलाओं को देखकर मुझे लगता है कि आप ही उनका भय हटा सकते हैं। कृपा करके शिलाओं को फिर से मनुष्य बनाकर उनके कुटुम्बों की रक्षा कीजिये।" सत्यप्रिय ने कहा।

यह सुन मान्त्रिक ने कहा—"क्या तुम ही इस ग्राम के मुखिया हो? सब जब मुझे देखकर डर रहे हैं, तो तुम क्यों मुझे देखकर मेरा यों सम्मान कर रहे हो? इस तरह का झूटा विनय मेरे सामने काम नहीं आयेगा।"

"झूटा विनय नहीं....महाशय! मैं भी थोड़ा बहुत ज्योतिष और मन्त्र जानता हूँ। आप देखने से बुरे नहीं मालूम होते। यदि आप सचमुच बुरे होते, तो मनुष्यों को क्यों शिला बनाते, उनको भस्म ही कर देते। ऐसी कोई चीज़ भी आपके पास नहीं है, जिन्हें देखकर यह कहा जा सके कि आप बुरे हैं। इसलिए ही मैं सम्मानपूर्वक आपसे पूछ रहा हूँ।"

सत्यप्रिय ने कहा। "ठीक है तुम्हारा अनुमान! क्या तुम भविष्य देखना चाहते हो!" उसने पूछा।

"नहीं तो...." सत्यप्रिय ने कहा।

"यह देख आश्चर्य होता है, जो इच्छा हर किसी में होती है, तुममें नहीं है। क्या इसलिए कि तुम्हें वैराग्य हो गया है!" मान्त्रिक ने पूछा।

इस पर सत्यप्रिय ने कहा—"वैराग्य नहीं। भगवान ने अच्छे उद्देश्य से ही हमारा भविष्य हमारे लिए गोप्य रखा है, ऐसी हालत में उसके बारे में जानने की उत्सुकता दिखाना गलत है, यह मेरा ख्याल है।"

"ठीक कहा है। तुम यही न चाहते थे कि इन तीन शिलाओं को मनुष्य बना दूँ! उस हालत में जो इन तीनों ने दृश्य देखे थे उनका अर्थ तुम ही बताओ, यदि नहीं बता पाओगे तो तुम भी शिला बन जाओगे। मँजूर है!" मान्त्रिक ने कहा।

"हाँ, जानता हूँ। बताइये, वे समस्यायें क्या हैं!" सत्यप्रिय बताने के लिए मान गया।

तब मान्त्रिक ने फिर वह पहिला दृश्य दिखाकर, कुछ जादू किया और उसका अर्थ पूछा।

सत्यप्रिय ने कहा—"इस राजमहल में सब तरह की सुभीतायें हैं। परन्तु इसकी नींव ठीक नहीं है, इसलिए वर्षा की अधिकता के कारण यह ढह गया। उसी तरह यदि हम अपने जीवन को सत्संग का आधार न देंगे, दुस्संग के कारण दुष्ट मित्र हमारे जीवन को बिल्कुल नष्ट कर देंगे।" उसके यह कहते ही पहिला व्यक्ति अपने असली रूप में आ गया।

मान्त्रिक ने दूसरे दृश्य को दिखाकर सत्यप्रिय से पूछा—"इसके बारे में क्या कहते हो?"

"इसमें क्या है, पेड़ की टहनियों पर रहनेवाले हज़ारों चिड़ियों का भूल से बाज़ का निगल जाना कोई बड़ी बात नहीं है। बलवान, दुष्टों का निष्कारण ही दुर्बल प्राणियों का स्वार्थ के लिए सताना इस संसार में हो ही रहा है।" सत्यप्रिय के यह कहते ही दूसरा आदमी भी अपने असली रूप में आ गया।

तीसरे दृश्य के बारे में सत्यप्रिय ने यों जवाब दिया—"यह अनुभव हम रोज़ ही देख रहे हैं। पीठ पर भले ही बहुत-सा भार हो, मौत भी नज़दीक हो, यदि वह बूढ़ा फिर भी ईन्धन चुग रहा है, तो यह सब आशा के कारण ही, आशा का कितना प्रभाव है, मनुष्य इससे ही जान सकता है। वही ज्ञानी है, जो इस आशा-पाश से जुदा हो सके।" सत्यप्रिय के यह कहते ही, तीसरा व्यक्ति भी अपने रूप में आ गया।

मान्त्रिक ने हँसते हुए कहा—"सत्यप्रिय यद्यपि तुमने अपना भविष्य नहीं पूछा है, तो भी तुम्हें तुम्हारा भविष्य बताता हूँ, सुनो। कल तुम्हें राजा बुलायेंगे और तुम्हारा खूब आदर होगा। तुम्हारी योग्यता परखने के लिए ही मुझे राजा ने यों भेजा है। मैं एक मान्त्रिक हूँ। उनके पास जाकर ज़रूर उनका आदर पाओ।"

पुजारी सत्यप्रिय का राजा ने सम्मान किया। तब से उसकी ख्याति देश में और भी बढ़ गई।

दो नगर

एक जहाज़ के व्यापारी के पास बामान्ग नाम का एक गुलाम था। चूँ कि बामान्ग ने व्यापार में उसकी बहुत सहायता की थी इस कारण उसका बहुत फायदा भी हुआ था, इसलिए उसको आजाद करते हुए व्यापारी ने कहा— "मेरे एक जहाज़ को लेकर, स्वतन्त्र रूप से व्यापार करके जीवन बिताओ।"

बामान्ग को पहिली मर्तबा कोई सफलता नहीं मिली। समुद्र में तूफ़ान आया और उसका जहाज़, मय माल के समुद्र में डूब गया। नाविक समुद्र में डूब गये। बामान्ग तैरता तैरता किनारे पहुँचा।

वह एक द्वीप था। बामान्ग द्वीप में गया। कुछ दूर चलकर एक बड़े शहर में गया। नगर की गलियों में लोगों का जमघट था। बामान्ग को ऐसा लगा, जैसे वे उस के लिए वहाँ जमा हुए हो।

उसके पास आते ही "महाराज की जय।" वे जय जयकार करने लगे। यह देख, बामान्ग ने चकित होकर कहा— "ये मुझे देखकर यह सोच रहे हैं कि मैं कोई और हूँ।"

लोग, बामान्ग के चारों ओर खड़े हो गये। वहाँ एक अलँकृत हाथी आया।

लोग बामान्ग को हाथी पर सवार करके राज मर्यादा के साथ राजमहल में ले गये। राजमहल में उसके कपड़े सुरक्षित एक जगह रख दिये गये। उसको स्नान कराया गया राजोचित वस्त्र पहिनाये गये।

बामान्ग ने अपने चारों ओर खड़े लोगों से कहा—"मुझे इस तरह राजा

विष्णुप्रिय

बनाने में आपका उद्देश्य क्या है? आप मुझे नहीं जानते, मैं आपको नहीं जानता। अचानक मेरा जहाज़ समुद्र में डूब गया और मुझे यहाँ आना पड़ा। परन्तु मैं स्वयं इस देश में अपनी इच्छा पर नहीं आया हूँ।"

तब उन लोगों ने उस देश के बारे में बताया। बाईस साल पहिले तक उस देश में कोई नियन्त्रित, नियमबद्ध शासन नहीं था। अराजकता थी। उस समय उस द्वीप में कोई देश संचारी आया। उसने बताया कि एक राजा के होने से जीवन नियन्त्रित होगा। राजा के शासन के कारण कितने ही देश समृद्ध हुए हैं। यदि राजा को निरंकुश होने से बचाना है, तो यही अच्छा है कि प्रति वर्ष उसको हटा दिया जाय और नया राजा बना लिया जाय। राजा हममें से न होकर कोई बाहर का हुआ, तो शासन निष्पक्ष होगा। तब से जो कोई इस द्वीप में बाहर से आता है, उसे राजा बनाकर उससे शासन करवाते आ रहे हैं। एक साल पूरा होते ही राजा को हटाकर उसे पास के जंगल में भेजकर, नये आदमी का इन्तज़ाम करते

हैं। जंगल में छोड़े हुए आदमी पर क्या बीतती है, लोग इसकी परवाह बिल्कुल नहीं करते।

इस तरह इस द्वीप के बाईस राजा हो चुके हैं। बामान्न तेईसवां राजा था।

बामान्न ने अपने राजभोग के बारे में अधिक न सोचकर साल भर बाद आनेवाले अरण्यवास के बारे में अधिक सोचने लगा। उसने कुछ सैनिकों को लेकर जंगल में जाना चाहा। उस द्वीप के पासवाले एक और द्वीप में वह जंगल था। वहाँ नाव में जाना होता था।

बामान्न ने जंगल सब तरह से देखा। उसमें मनुष्यों का जीना कठिन था। परन्तु वहाँ अच्छी लकड़ी थी और खेती के लिए उपजाऊ भूमि भी थी।

जंगली पेड़ों को कटवाकर वहाँ अच्छा शहर बसाया जा सकता था। फलों के बाग, फूलों के बगीचे लगाये जा सकते थे।

बामान्न ने इस काम पर आदमियों को लगाया। उसके एक साल खतम होते ही जंगल में एक बड़ा शहर बनकर तैय्यार हो गया। नगर के चारों ओर सुन्दर बाग लगा दिये गये। जिन्होंने नगर बनाने में काम किया था, उन्होंने वहीं बसना चाहा।

एक साल पूरा हो गया। बामान्न नये शहर में आ गया। उसके साथ बहुत-से नागरिक पुराने नगर से नये नगर में आ गये। पुराने नगरवाले उसे न छोड़ना चाहते थे। उन्होंने एक सभा बुलवाई और उसमें निर्णय किया कि दोनों नगरों का हमेशा के लिए बामान्न ही राजा रहे।

युद्धकाण्ड

हनुमान का वृत्तान्त सुनकर राम ने सन्तुष्ट होकर कहा—"जो काम हनुमान ने किया है, वह कौन कर सकता है और तो और कोई इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता। समुद्र को पार करना, सिवाय गरुत्मन्त, वायुदेव और हनुमान के किसी और के लिए सम्भव नहीं है! यही नहीं हनुमान उस लंका में पहुँचा, जहाँ देवताओं को भी प्रवेश नहीं है। घुसा ही नहीं, वहाँ से जीवित वापिस भी आ गया है। वह अशोक वन नाश, राक्षस संहार, लंका दहन आदि आश्चर्यजनक कार्य भी करके आया है! इस हनुमान ने हमारी और सीता की रक्षा की है। चाहे इसे कुछ भी दूँ, पर मेरा ऋण नहीं चुकेगा। इन सब के बदले, मैं इसको आलिंगन कर लेता हूँ।" कहते हुए उन्होंने हनुमान को झट गले लगा लिया।

फिर राम ने सुग्रीव से कहा—"सीता का तो हमने पता लगा लिया है, पर अब मैं समुद्र के बारे में सोचता हूँ, तो मेरा दिल दहल उठता है। उसको पार कैसे किया जाये!" राम और लक्ष्मण भी इसी सोच में पड़ गये।

तब सुग्रीव ने राम को देखकर कहा—"क्यों आप चिन्ता करते हैं! यदि हम

समुद्र पर पुल बाँधकर, उस पार पहुँच गये, तो रावण को मरा ही समझिये। बिना समुद्र पर पुल बनाये, लंका को जीतना देवताओं के लिए भी असम्भव है। इसलिए चिन्ता छोड़कर, सोचिये कि क्या किया जाय! इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आपको विजय मिलेगी।"

यह सुन राम ने कहा—"तपस्या करके, नहीं तो पुल बनाकर या समुद्र को सुखाकर, जैसे भी हो, लंका पहुँचकर रहूँगा। इस विषय में अब चिन्ता की कोई आवश्यकता नहीं है।"

फिर उन्होंने हनुमान से पूछा—"लंका में कितने दुर्ग हैं? कितनी सेना है? पहरा-वहरा कैसा है? प्राकार आदि के बारे में सब सविवरण बताओ।"

हनुमान ने यों कहा—"लंका में सब सन्तुष्ट हैं, वहाँ कोई असन्तुष्ट नहीं है। नगर विशाल है। वहाँ पर्याप्त चारों सेनायें हैं। उसके चार बड़े द्वार हैं। द्वार के पास शत्रुओं का नाश करने के लिए पत्थर फेंकनेवाले बड़े बड़े यन्त्र लगे हुए हैं। सैकड़ों आदमियों को मारनेवाली तोपें हैं। नगर के चारों ओर दुर्लंघ्य प्राकार हैं। उसके बाद गहरी खाई है। उसको पार करने के लिए द्वारों के पास लकड़ी के पुल हैं। उनको यन्त्रों की सहायता से लाया जा सकता है और नीचे उतारा जा सकता है। शत्रुओं को आता देख यदि उन पुलों को उठा दिया गया, तो खाई पार करना असम्भव है। रावण बड़ा सावधान है। शत्रु के भय के न होने पर भी वह अपनी सेना को हमेशा सन्नद्ध रखता है। लंका चार तरह से सुरक्षित है। एक तो, इसके चारों ओर समुद्र है। लंका चूँकि ऊँचे त्रिकूट पर्वत

पर है, इसलिए लंका पहुँचने से पहिले उस पर चढ़ना ज़रूरी है। यह हुआ दूसरा, वहाँ के जंगल तीसरा और खाई चौथी यन्त्र और तोपें वगैरह भी, द्वारों के पास और शहर में भी करोड़ों योद्धा हैं। मैंने खाई के पुलों को नष्ट कर दिया है और खाई को भर दिया है। प्राकार को भी ध्वंस कर दिया है। कई पराक्रमी राक्षसों को मार दिया है। इसलिए अब लंका को वश में लाना उतनी कठिन बात नहीं है। बड़ी सेना की भी कोई जरूरत नहीं है। अंगद, द्विविद, मैन्द, जाम्बवन्त, मनस, नल और सेनापति नील काफी हैं। अगर ये चाहें तो सारी लंका को, राक्षसों के साथ उठाकर ला सकते हैं। अंगद आदि को आज्ञा देकर अच्छा मुहूर्त निश्चित करने की कृपा कीजिये।"

राम ने सब सुनकर हनुमान से कहा— "अच्छा, तो उस लंका को खतम करेंगे।" फिर उन्होंने सुग्रीव से कहा— "आप इस समय ही सेना लेकर चलें। ठीक दुपहर का समय है। यह अच्छा मुहूर्त है। अवश्य कार्यसिद्धि होगी। यही नहीं आज उत्तर फलगुनी नक्षत्र है। क्योंकि मेरा जन्म नक्षत्र पुनर्वसु है इसलिए यह मेरे अनुकूल है और भी कई शुभ लक्षण दिखाई दे रहे हैं। इसलिए तुरत निकल पड़ना ही मुझे उचित प्रतीत होता है।"

राम ने वानर सेनानायक नील को बताया कि वानर सेना में किसको आगे रहना है। पार्श्व में कौन कौन हो, कौन वानर योद्धा कौन काम करे। मार्ग में शत्रुओं से कैसे सावधान रहा जाये, आदि, उदाहरण के लिए, वानरों के मार्ग

में राक्षस फल फूल, जो उनका आहार है, नष्ट कर सकते हैं। घाटियों में नदियों का पार करने की जगह पर राक्षस उनको घेरकर मार सकते हैं। ऐसी कोई आपत्ति न आये यह देखना आगे जानेवाली सेना का कर्तव्य है।

सुग्रीव के कूच की आज्ञा देते ही, युद्धोत्सुक वानर गुफाओं में से, पहाड़ों पर से, पेड़ों पर से कूदते आये। वानर सेना दक्षिण की ओर निकल पड़ी।

हनुमान ने राम को और अंगद ने लक्ष्मण को अपने कन्धों पर संवार कर लिया। असंख्य वानर उनके चारों ओर उछलते, कूदते, होहल्ला करते दौड़ते भागते, "रावण को मारना है, राक्षसों को मारना है।" चिल्लाते चल रहे थे। महापराक्रमी वानरोत्तम ऋषभ, नील, कुमुद आदि बड़ी सेना के साथ आगे रास्ता कर रहे थे।

रास्ते में लक्ष्मण ने राम को उत्साहित करते हुए कहा—"अब जल्दी ही रावण मरेगा। सीता को मुक्ति मिलेगी। तुम दोनों वापिस अयोध्या जाओगे। वातावरण उत्साहजनक है। नक्षत्र अनुकूल हैं। राक्षसों का नक्षत्र मूला नक्षत्र धूमकेतु को छू रहा है।"

रास्तों में वानर पेड़ों पर से, पेड़ों के नीचे चलते, उछलते कूदते, चीखते चिल्लाते, टहनियाँ तोड़ते, फल खाते, शहद पीते, कहीं बिना रुके, सह्य पर्वत, मलय पर्वत पार करके समुद्र तट पर पहुँचे।

राम, लक्ष्मण, सुग्रीव के साथ महेन्द्रगिरि की चोटी पर गये वहाँ से समुद्र को देखा। फिर पर्वत से उतरकर समुद्र को पास से देखा। उन्होंने सुग्रीव से कहा—"अब हमारे सामने समुद्र ही है। भूमि नहीं

है। हमने कहा था कि इसको पार करने का कोई उपाय सोचना होगा। अब वह सोचने का समय आ गया है। अभी सेना को यहीं छोड़ा जाये, कोई भी अपनी सेना को छोड़कर दूर न जाये। शत्रुओं से रक्षा के लिए शूर वानरों का पहरा है।"

सुग्रीव की आज्ञा पर वानर सेना तीन भागों में बाँट दी गई। उस समय वानरों ने जो शोर किया, उसके सामने समुद्र गर्जन भी न सुनाई पड़ता था। वानर समुद्र को देखकर चकित थे। वे न जान पा रहे थे कि समुद्र को कैसे पार किया जाये।

वानर सेनापति नील ने सेना की व्यवस्था शास्त्रोत्तम रीति से की। वानरोत्तम, मैन्द, द्विविद को सेना की रक्षा के लिए दोनों तरफ़ नियुक्त किया।

सेना की व्यवस्था हो जाने के बाद राम, सीता के वियोग में काफ़ी देर दुखी रहे। लक्ष्मण को अपना दुख सुनाया। इतने में सूर्यास्त हो गया। लक्ष्मण के आश्वासन देने पर, खिन्न मन से राम ने सन्ध्या की।

इस बीच रावण अपमानित हो अपने राक्षस प्रमुखों से कह रहा था—शत्रुओं के लिए अभेद्य लंका में एक बन्दर आया, बड़े बड़े राक्षसों को मारकर, लंका को जलाकर, उसने कुहराम मचा दिया। सीता से बात करके चला गया। अब राम हज़ारों वानरों को लेकर हम पर आक्रमण करने आ रहा है। इसमें सन्देह करने की कोई ज़रूरत नहीं है कि वह अपने भाई और सुग्रीव आदि के साथ वानर सेना को लेकर, समुद्र पार करके आ सकता है। वह अपनी शक्ति से समुद्र को सुखा

सकता है, नहीं तो कुछ और कर सकता है। जब वह वानर सेना के साथ हम पर हमला करेगा, तो लंका की किस तरह हम रक्षा करेंगे? सब अच्छी तरह सोच विचारकर एक निश्चय बताओ।"

यह सुन राक्षसों ने कहा—"राक्षसेश्वरा! आपको इस बात पर चिन्ता ही क्यों हुई? हमारे पास असंख्य सेना है। हमारे पास अनन्त शतघ्नी, शूल, करवाल कितने ही आयुध हैं। आप हैं, जो तीनों लोकों के विजयी हैं। कुबेर और यक्ष को जीतकर पुष्पक लाये हैं। यम ने भयभीत होकर अपनी पुत्री का (मन्दोदरी) आपके साथ विवाह किया है। वासुकी तक्षक आदि नागराज आपके आधीन हैं। अपार शक्तिवाले, मायावी, कालकेय आप से एक वर्ष युद्ध करके आखिर पराजित हुए थे। वरुण और यम को आपने हराया है। उनकी तुलना में राम क्या चीज़ है? उन सब को जीतने के बाद राम की क्या हस्ती है? आप अपनी बात छोड़िये। महेश्वर यज्ञ करके, वर प्राप्त करके देवेन्द्र से लड़कर उसको बाँधकर लंका लानेवाले इन्द्रजित, क्या इसके लिए काफी नहीं है? वे क्षण में राम और उसकी सेना को नष्ट कर सकते हैं। हनुमान की की हुई हानि के बारे में न सोचिये। उसे भूल जाइये।" वे मूर्ख थे। वे शत्रु का बल बिल्कुल न जानते थे।
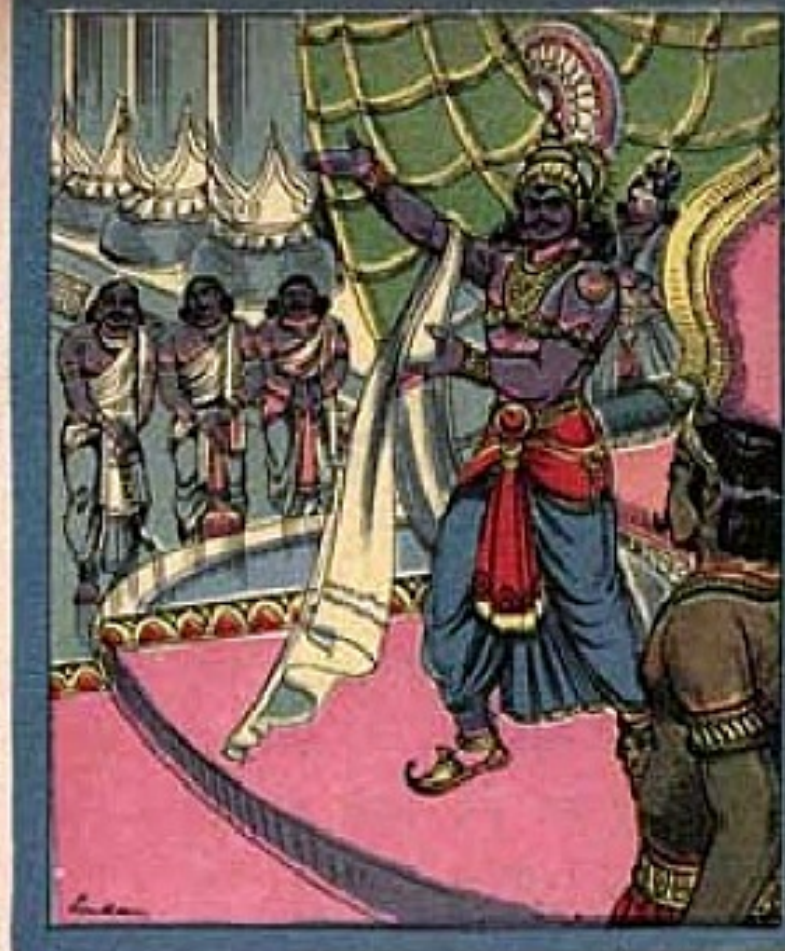
तुरत प्रहस्त उठा। रावण को नमस्कार करके उसने कहा—"हम जो देव, मानव, गन्धर्व, पिशाच आदि से नहीं डरते हैं, क्या बन्दरों से डरेंगे? हम इसी ख्याल में रहे कि हमें कोई जीत न सकता था और हनुमान हल्ला कर गया, नहीं तो

मेरे जीते क्या वह लंका आ सकता था! आज्ञा दीजिये, मैं भूमि पर बन्दरों का नामों निशान नहीं छोड़ूँगा। लंका की रक्षा का काम मुझपर छोड़ दीजिये। आप निश्चिन्त रहिये।"

"हनुमान ने हमारा और हमारे राजा का सचमुच ऐसा अपमान किया है, जिसे क्षमा नहीं किया जा सकता। मैं अकेला ही उन सब वानरों को मारकर आता हूँ।" दुर्मुख ने कहा।

वज्रदंष्ट्र ने गुस्सा उगलते लोहे की गदा हाथ में लेकर कहा—"आधी रात के समय, चोर की तरह आये हुए हनुमान की क्या बात है! मैं जाकर उस शूर राम को लक्ष्मण और सुग्रीव के साथ मार दूँगा। राजा, एक और बात बताता हूँ। इस शत्रु को एक और उपाय से जीता जा सकता है। कामरूप राक्षस मनुष्य का रूप धारण करके राम के पास जायें और कहें—"हमें भरत ने भेजा है। वह बड़ी सेना के साथ आ रहे हैं।" राम जब उनके आने की प्रतीक्षा में हों, तब हम अचानक उनपर हमला करें और उनको नष्ट कर दें। राम लक्ष्मण यह सर्वनाश देखकर स्वयं मर जायेंगे।"

इस प्रकार कुम्भकर्ण के लड़के निकुम्भ ने भी कहा कि वह अकेला ही जाकर वानर सेना और राम लक्ष्मण को मार आयेगा।

वज्रदन ने कहा कि वह सब वानरों को खा आयेगा और भी कई राक्षस वीरों ने खड़े होकर कहा कि वे वानरों को मार आयेंगे।

चावल का चोर

पन्नालाल की पत्नी मीनाक्षी ने अपने मायके में एक लड़के को जन्म दिया। पन्नालाल गाड़ी लेकर अपनी ससुराल गया। वहाँ लड़के की जन्मकुंडली बनवायी, नामकरण करवाया। अच्छा दिन देखकर वह पत्नी और लड़के को गाड़ी में बिठाकर, अपने गाँव के लिए निकल पड़ा।

अन्धेरा होते होते वे एक कस्बे में पहुँचे। वहीं दो चार दिन ठहरकर मीनाक्षी ने आवश्यक चीज़ें खरीदने की सोची। वे एक धर्मशाला में गये और वहाँ एक खाली कमरा ले लिया।

पन्नालाल जब धर्मशाला के पास के कुँये के पास हाथ मुँह धो रहा था, तो वहाँ कोई भागा भागा आया और वहाँ गिर गया। उसके कन्धे का गठ्ठर भी नीचे गिर गया। पन्नालाल ने उसे उठाया और गठ्ठर हाथ में लेकर, उसे धर्मशाला में ले गया। उस आदमी के घुटने और कोहनियों में चोट लग गई थी।

"कौन हो तुम? ये चोट तुमको कैसे लगी? क्यों यों भाग रहे हो? किस बात का डर है?" पन्नालाल ने उस आदमी से पूछा।

उस आदमी ने कहा—"जब मैं चावल खरीदकर आ रहा था, तो सिपाही "चोर चोर" चिल्लाते मेरे पीछे पड़ गये। न मालूम वे क्या करें, इस डर से, मैं जोर से भागा। दो जगह गिरा, इसलिए घुटनों और कोहनियों पर चोट आ गई। मेरा घर ज्यादह दूर नहीं है। पर यह सोच कि यदि घर गया, तो सिपाही, मेरी पत्नी और बच्चों को सतायेंगे, मैं इस तरफ़ चला

पन्नालाल ने मीनाक्षी को अलग बुलाकर कहा—"इस आदमी की चोटों पर थोड़ा तेल लगाकर, हल्दी लगाओ। यदि कोई उसको ढूँढ़ता आये, तो इसके बारे में न बताना। कहना कि वह "हमारा आदमी" है।" फिर वह गठ्ठर लेकर, उस आदमी के घर निकल पड़ा।

उसके जाने के कुछ देर बाद, सिपाही उस तरफ़ आये, बराण्डे में खड़ी मीनाक्षी से पूछा—"क्या कोई इस तरफ़ लाल गठ्ठर लिए भागा भागा आया था?"

"कोई नहीं आया था!" मीनाक्षी ने कहा। सिपाहियों ने कमरे में झुककर देखा, कहीं लाल गठ्ठर नहीं दिखाई दिया। पर तौलिया ओढ़े कमरे के एक तरफ़ कोई आदमी सोता दिखाई दिया।

"वह आदमी कौन है?" सिपाहियों ने पूछा।

"हमारा आदमी है, उसकी तबीयत ठीक नहीं है।" मीनाक्षी ने कहा।

वे तो चले गये, पर उसी समय दो सिपाहियों ने पन्नालाल को पकड़ा। उन्होंने गठ्ठर को पहिचाना। पन्नालाल को ही चोर समझकर उसको और उसके गठ्ठर को

आया। अब मैं चल भी नहीं सकता हूँ। सवेरे से मेरे परिवारवालों को पानी के सिवाय कुछ नहीं मिला है। वे इस चावल की इन्तज़ार कर रहे होंगे। क्या किया जाय?"

पन्नालाल ने उससे कहा—"दुःखी मत हो। थोड़ी देर यहीं आराम करो। यदि तुमने घर का पता बताया, तो मैं ही इस गठ्ठर को उठाकर तुम्हारे घर पहुँचा आऊँगा।"

उस आदमी ने हाथ जोड़कर कहा—"यह काम कर दीजिये। आपका भला होगा।" उसने अपने घर का पता वगैरह दिया।

उस आदमी के पास ले गये, जिसका गट्ठर चोरी गया था। उस आदमी ने गट्ठर तो पहिचान लिया, पर पन्नालाल को न पहिचान सका। उस ने देखा भी न था कि किस आदमी ने अन्धेरे में उसका चावल का गट्ठर चुराया था।

"क्यों चोरी की?" पन्नालाल से सिपाहियों ने पूछा।

"मैंने चोरी नहीं की है!" पन्नालाल ने कहा।

"चोरी तो की ही, अब साथ झूठ भी बोल रहे हो।" सिपाही पन्नालाल को मारते मारते थाने की ओर ले गये। रास्ते में लोग जमा हो गये। उनमें से एक ने कहा—"यह आदमी वही न है, जो अन्धेरा होने के बाद धर्मशाला में उतरा था!"

सिपाहियों ने पन्नालाल से पूछा—"क्या तुम धर्मशाला में ठहरे हो!"

"नहीं, तो...." पन्नालाल ने अपना सिर हिलाया। उसे इस बात की फ़िक्र न थी कि उसे चोर बताया जा रहा था, पर उसको यह अफ़सोस था कि उन तक वह चावल न पहुँचा पाया था, जो सवेरे से भूखे थे।

थाने के रास्ते में धर्मशाला थी। बराण्डे में मीनाक्षी को खड़ा देखकर उन्होंने पूछा—"क्या इस आदमी को जानते हो!"

"अब चोर समझकर पकड़कर ले ही जा रहे हो, तो क्यों हर किसी से पूछते हो!" पन्नालाल ने खिझकर कहा।

मीनाक्षी ने देखा कि पन्नालाल को सिपाहियों ने पकड़ रखा था। उसने अपने पति का रुख जानकर कहा—"ये कौन हैं मुझे नहीं मालूम।"

सिपाही पन्नालाल को लेकर आगे बढ़े। यह सब देखकर असली चोर बाहर आया।

मीनाक्षी ने उससे कहा—"तुम कहाँ जा रहे हो, तुम्हारी तबीयत तो वैसे भी ठीक नहीं है।"

"तुम और तुम्हारे पति देवता हैं। मनुष्य नहीं है। मैं चोर हूँ। बीबी, बच्चों को भूख से मरता देख न सका, इसलिए मैंने चोरी की है। किन्तु क्या, मैं अपने बदले तुम्हारे पति को सज़ा पाने दूँगा? उतना नीच नहीं हूँ।" वह आदमी भी थाने की ओर चल पड़ा।

कोतवाल ने पन्नालाल से पूछा—"तुम कौन हो? क्या नाम है तुम्हारा? क्या गाँव है? क्यों चोरी की?"

"हुज़ूर, जब मैंने कहा कि मैं चोर नहीं हूँ, तो आपके सिपाहियों ने विश्वास नहीं किया। उन्हें चोरी गया माल मिल गया और साथ मैं भी। यदि किसी को सज़ा देनी ही है, तो मुझे दीजिये। बाकी और बातों की क्या ज़रूरत है।" पन्नालाल ने कहा।

इतने में असली चोर ने आकर कहा—"हुज़ूर, उन्हें छोड़िये। मैंने चोरी की है।"

"यह कौन है?" कोतवाल ने सिपाहियों से पूछा। उन्होंने कहा कि वे उसे नहीं जानते थे। "यदि तुम चोर हो, तो यह आदमी कौन है।" कोतवाल ने कहा।

"हुज़ूर, मैं इसी शहर में पैदा और बड़ा हुआ हूँ, पर यह आदमी कौन है मैं नहीं जानता। ये इस शहर के नहीं हैं।" चोर ने कहा।

कोतवाल ने खिझकर कहा—"तुम दोनों मेरे सामने से हटो।" फिर उसने सिपाहियों को डाँटकर कहा—"जब चोर खुद आकर कहे कि वह चोर है, तब तुम सच की क्या ज़रूरत है?" सिपाही कुछ भी उत्तर न दे सके।

३१. प्राचीन माया स्तम्भ

कोलम्बस के अमेरिका का पता लगाने से बहुत पहिले ही, वहाँ एक सभ्यता पनपकर, नष्ट भी हो चुकी थी। वह सभ्यता ही माया सभ्यता थी।

रेड-इन्डियन ही इस सभ्यता के उत्तराधिकारी हैं। इनकी भाषा भी माया भाषा के बहुत समीप है।

ग्वाटिमाला, दक्षिण मेक्सिको, पुराने, होन्डुरास, आदि देशों में, प्राचीन माया नगर मिले हैं। जहाँ वे पहिले थे, वहाँ आज घने जंगल हैं।

पुरातत्व अन्वेषकों ने माया नगरों की खुदवायी करवाई, उनके बारे में अनुसन्धान किया। माया शिल्पों को सुरक्षित किया।

माया सभ्यता, कृषि पर आधारित सभ्यता थी। उनका ज्योतिषशास्त्र का ज्ञान भी निर्दुष्ट था। सभ्यता का प्रभाव क्षेत्र भी विस्तृत था।

बगल के चित्र में जो स्तम्भ दिखाई दे रहा है, वह हज़ार वर्ष पूर्व का है। अब भी वह सुरक्षित है। आज जो माया स्तम्भ मिलते हैं, उन सब में यह ऊँचा है।

इसके आस पास बहुत-से माया सभ्यता के चिन्ह, शिल्प और अवशेष मिले हैं।

यह पोर्टो बारियोस और ग्वाटिमाला के रेल मार्ग के समीप है।